भूमिका

भारतीय इतिहास को जानने के लिए विभिन्न एतिहासिक ग्रन्थो, शिलालेखो, ताम्रपत्रो, दस्तावेजो आदि का अध्ययन करना पडता है। इसमे विभिन्न सवतो का प्रयोग होता आ रहा है। कौन सवत कब और कैसे प्रचलित हुआ, यह इतिहास के विद्यार्थी को जानना अत्यन्त आवश्यक है। इसके न जानने से वह कई भूले कर सकता है। अत. इस पुस्तक मे विभिन्न सवतो का सक्षेप मे इतिहास दे दिया गया है। प्राचीनकाल से अब तक कालगणना कैसे की जाती रही है इसका विवेचन भी इस पुस्तक मे मिलेगा। सम्पूर्ण काल गणना सूर्य व चन्द्र की गति पर निर्भर है अत सूर्य व चन्द्र गणना का विवरण देते हुए, अधिक मासो व क्षय मासो, चन्द्रग्रहणो व सूर्यगहणो की सूची भी दे दी गई है।

पुस्तक के अत मे भारतीय इतिहास की कुछ महत्वपूर्ण घटनाओ की तिथिया दे दी गई है जो विद्यार्थी इन्हे उपयोगी पायेगे। ये घटनाये विभिन्न ग्रन्थो मे, विक्रम सवत, शक सवत, हिजरी सन् आदि मे दी हुई थी। इन्हे इस्वी सन् मे परिवर्तित कर दे दिया गया है।

इस पुस्तक की तैयारी मे पचासो इतिहास ग्रंथ, कई ज्योतिप ग्रन्थो, आदि का उपयोग किया गया है। हम इसके लिए उन ग्रथकताओ के आभारी है।

काफी सावधानी रखते हुए भी इसमे कुछ गलतिया रह गई होगी, यह हम जानते है। सुविज्ञ पाठको से निवेदन है कि यदि वे कोई विशेष गलती पावे तो हमे अवश्य सूचना करावे ताकि आगे के सस्करण मे सशोधन किया जा सके।

जोधपुर
जून 1979

— लेखक द्वय

विषय–सूची

काल गणना

पंचांग

परिशिष्ट

भारतीय कालगणना और पंचाग

प्रारम्भिक

काल: सृजति भूतानि काल. सहरते प्रजा:

अर्थात, काल के अनुसार सृष्टि की उत्पति और समाप्ति होती है। उसी के कारण ऋतुओ मे परिवर्तन होते है। काल वीतने पर ही वालक पुरूष वन जाता है। काल से ही इतिहास का ज्ञान होता है। काल की गति अवाध है। समय किसी के लिये रुकता नही। अस्तु काल की गणना दिन व रात, ऋतु तथा वर्ष के किसी न किसी रूप मे प्राचीन काल से ही की जाती रही है। आजकल काल की गणना 'वर्ष' द्वारा की जाती है लेकिन वहुत प्राचीन काल मे यह गणना चन्द्रमा के उदय व विकास तथा ऋतुओ के परिवर्तन द्वारा की जाती थी। वर्ष का अभिप्राय ही एक वर्षाकाल के प्रारम्भ से दूसरे वर्षाकाल के प्रारम्भ होने तक के समय से है। ससार के प्राचीनतम ग्र थ ऋग्वेद मे एक वर्ष मे तीन ऋतुओ—शरद्, वसन्त और हेमन्त का होना वतलाया गया है—

शत जीव शरदो वर्धमान· शत हेमन्ताञ्छतमु बसन्तान। (ऋग्वेद मण्डल 10/161/4)

ऋतुओ की उत्पत्ति अथवा परिवर्तन सूर्य के कारण होता है अत सूर्य को ऋतुओ का पिता या सविता कहा गया है। इसी से ऋतु चक्र, सवत्सर कहलाते है। एक सवत्सर मे पाच ऋतुये होती है और ऐसे पाच ऋतु चक्रो का एक युग होता है। इन ऋतु चक्रो के नाम है—सवत्सर, परिवत्सर, इडात्सर, अनुवत्सर और उद्वत्सर। इन पाच वत्सरो या अगो का गणित द्वारा अनुसधान कर उनका वर्णन करना पचाग कहलाता है। सामान्य रुप से पचाग मे तिथि, वार, नक्षत्र, योग व करण वतलाये जाते है। इससे आसानी से ज्ञात हो जाता है कि किस दिन क्या तिथि या वार है, वर्ष का आरम्भ कव हुआ, इस वक्त सूर्य या चन्द्रमा किस स्थान पर है, आदि, आदि।

आज कल तो पचाग वहुत ही सुलभ हो गये है और उसके नियम इतने सुलभ हो गये है कि अव हम सोच ही नही सकते कि प्राचीन काल मे तिथि आदि जानने मे कितनी कठिनाईया आती थी। जव तक मनुष्य केवल आखेट, या जगली फल फूलो पर निर्भर था तथा अधेरी गुफाओ मे रहता था, उसे समय के महत्व का ख्याल ही नही आया होगा परन्तु जव वह कृषि पर निर्भर होने लगा तव उसने समय के महत्व को पहचाना होगा क्योकि वर्षा के कारण काश्त निश्चित समय पर ही हुआ करती थी। भूमि साफ करने, हल चलाने, बीज वोने व फसल काटने के लिए वर्षा के आगमन का समय जानना उसके लिये अनिआवश्यक हो गया। ज्यो-ज्यो मनुष्य सुसभ्य होकर सामाजिक जीव होता गया उसके लिये समय का महत्व वढता ही गया। मानव समाज मे नाच रग, खेल-कूद, उत्सव–त्यौहार मनाये जाने लगे। उनका भी समय निर्धारित किया गया। इनका समय निश्चित करने के लिये पुराने अनुभवो को प्रयोग मे लिया गया और उन अनुभवो के आधार पर समय का विभाजन किया गया। यह विभाजन मोटे रूप मे तीन बातो के कारण किया गया। वे है—दिन, चान्द्र मास और वर्ष। दिन के साथ रात, चन्द्रमास मे शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष और वर्ष मे ऋतुओ का समावेश किया गया होगा।

काल विभाजन

प्राचीन काल मे मनुष्यो ने देखा होगा कि कुछ समय के लिये सूर्य आकाश मे रहता है। वह पूर्व मे उदय होकर पश्चिम मे अस्त हो जाता है और उसका यह क्रम निरन्तर चलता है। जब तक सूर्य आकाश मे रहता है पृथ्वी पर प्रकाश रहता है और उसके अस्त होते ही चारो ओर अधेरा हो जाता है। अत उन्होंने सबसे पहले दिन और रात का विचार किया होगा कि निरन्तर दिन के बाद रात और रात के बाद दिन आता है। एक सूर्योदय से दूसर सूर्योदय के समय को उन्होंने एक इकाई मान कर उसका नाम 'दिन' रखा होगा लेकिन यह इकाई उनके लिये बहुत छोटी थी। मनुष्य के जीवन मे ऐसे हजारो दिन आते होगे और उसमे कई महत्वपूर्ण घटनाये होती होगी। उनको दिन मे याद रखना बड़ा कठिन प्रतीत हुआ होगा। इसके कारण उसने दिन से बडी इकाई खोजी।

मनुष्य ने सूर्य के साथ साथ चन्द्रमा पर भी गौर किया। उन्होने देखा कि चन्द्रमा एक दिन शाम को पश्चिम मे पतली प्रकाश-युक्त अर्ध गोलाकार (चाप) रुप मे दिखाई देता है। यह धीरे-धीरे बढता जाता है और लगभग 15 दिन पश्चात् पूर्व मे शाम को पूर्ण गोल दिखाई देता है। उसके बाद वह क्षीण होना आरम्भ होता है और फिर आकाश से अदृश्य हो जाता है। उसके बाद फिर संध्या को पश्चिम मे दिखाई दे जाता है। उसका यह क्रम बराबर लगभग तीस दिनो के अन्तर से चलता रहता है। उन्होने तब चन्द्रमा के पूर्ण गोलाकार होने या पूर्ण अदृश्य होने से अगली बार पूर्ण गोलाकार होने या पूर्ण अदृश्य होने के समय को एक इकाई माना होगा और उसे मास नाम दिया होगा। यह इकाई भी बहुत लम्बे समय को नापने के लिये कालातर मे असुविधाजनक लगी होगी। अत चन्द्रमास से भी बडी इकाई की ओर मनुष्य का ध्यान गया होगा।

मनुष्य ने देखा कि वर्षा, सर्दी और गर्मी बराबर एक क्रम से आती रहती है। कृषि पर निर्भर रहने के कारण वर्षा उनके लिये अत्यन्त उपयोगी थी। अत उसने एक वर्षा मे दूसरी वर्षा के बीच के समय को एक इकाई मान लिया और इसका नाम वर्ष रखा। एक इकाई का नाम केवल वर्षा के कारण वर्ष ही नही था बल्कि अन्य ऋतुओ के नाम भी इस इकाई के रुप मे प्रयुक्त होते थे जैसे शरद्, वसन्त, हेमन्त। ऋग्वेद के एक मत्र मे एक वर्ष को शरद्, हेमन्त और वसन्त-तीन नामो से कहा गया है, यह पहले लिखा जा चुका है।

ज्योतिष की उत्पति

वर्ष को एकाई मान लिया गया लेकिन मनुष्य यह पूर्णतया सही सही जान नही सका कि वर्ष मे कितने महीने और दिन होते है। वर्ष ही क्यो, महीने व दिन की एकाई का सही समय भी वह नही जान सका। यह तो हम भी देखते है कि सूर्य उदय या अस्त एक ही निश्चित समय पर नही होता है। यह भी जानते है कि चान्द्रमास 29 या 30 दिन का ही नही होता है और वर्ष 12 चान्द्रमासो का ही नही होता है। एक वर्ष मे 12 चान्द्रमासो से कुछ दिन ज्यादा होते है। एक चान्द्रमास मे 29 दिन से कुछ ज्यादा समय ही होता है और 30 दिन से कुछ समय कम ही होता है। प्रत्येक दिन अपने से अगले या पिछले दिन से कुछ

सैकण्ड कम या ज्यादा ही होता है। प्राचीन काल मे समय नापने के वर्तमान काल की तरह के सूक्ष्म समय मापी यत्र नही थे अत इन सब इकाइयो का सही मान मनुष्य को वहुत समय वाद अनुभव से ज्ञात हुआ होगा। इन तीनो इकाइयो के सम्वन्ध मे खोज प्राचीन काल से वरावर चली आ रही है। इन्ही खोजो के फलस्वरूप ज्योतिष की उत्पत्ति हुई।

प्राचीन काल मे ज्योतिष सम्वन्वी ज्यादातर आविष्कार विना यत्रो के ही किये गये थे। धीरे धीरे विभिन्न प्रकार के यत्रो व वेधशालाओ का निर्माण हुआ और अव तो हम समय की निम्नतम इकाई तक की भली प्रकार गणना कर सकते है।

ज्योतिष के दो विभाग

ज्योतिष विद्या के भी दो विभाग है—गणित ज्योतिष व फलित ज्योतिष। गणित ज्योतिष मे आकाश के पिण्डो के विषय मे वाते गणित द्वारा वतलाई जाती है। फलित ज्योतिष मे ग्रहो व उपग्रहो की गति से मनुष्य के भाग्य का सम्वन्ध वतलाया जाता है। किसी व्यक्ति के जन्म के समय सूर्य, चन्द्र, शुक्र, मगल, वृहस्पति, वुध आदि ग्रह जिन स्थानो पर थे उनकी गणना कर उस व्यक्ति के जीवन के सम्बन्ध मे वाते फलित ज्योतिष द्वारा वतलाई जाती है।

फलित ज्योतिष का सम्वन्ध गणित ज्योतिष से कितना है यह विवादास्पद है। इसमे कोई सन्देह नही कि विश्व के ज्यादातर लोग फलित ज्योतिष मे विश्वास रखते है। इसका मुख्य कारण मानव का भविष्य को जानने की अपार इच्छा व चिन्ताग्रस्त रहना है। इच्छाओ की पूर्ति व चिन्ताओ को दूर करने के लिए मानव भाग्य का सहारा लेता है। ज्योतिषी विश्वास दिलाते रहते है कि सव कुछ उनके जन्मकाल के समय पर स्थित ग्रह मण्डल पर निर्भर है। ग्रहो की अलौकिक शक्ति पर मानव आदिम काल से ही विश्वास करता आया है। आदि मानव जव देखता था कि आकाश मे कुछ तारे अन्य तारो से ज्यादा ही चमकिले है व वरावर अपना स्थान वदलते रहते है तो इसमे उसे दैनिक चमत्कार लगा। कुछ तारे शाम को दिखाई देने के वाद छिप जाते व फिर प्रातः ही दिखलाई दे जाते है। इन पर गौर कर मानव मे धारणा घर कर गई कि सूर्य व चन्द्र के साथ नक्षत्रो का मिलान कभी लाभदायक होता है तो कभी कष्टदायक भी। वह भूकम्प, वाढ, अतिवृष्टि आदि को इन नक्षत्रो के फेरवदल के कारण मानने लगा क्योकि ग्रह नक्षत्रो की स्थिति पर उसने वर्षा को होते देखा था। इसके विषय मे कल्पना लगभग 1000 वर्ष ईसा पूर्व मेसोमोटेमियां के लोगो को हुई। मानव के मनोवल के गिरने के साथ ही साथ ग्रहो पर आधारित ज्योतिष लोकप्रिय हो गई। प्रारम्भ मे यह विद्या शासको व उच्च अधिकारियो ने अपनाई। वे सोचने लगे कि मनुष्य के जन्म के समय के ग्रहो की स्थिति मनुष्य के भावी जीवन को प्रभावित करती है। जन्म काल के समय आकाश मे स्थित कुछ ग्रह शुभ होते है तो कुछ अशुभ। उनकी स्थिति के अनुमार ज्योतिषी भविष्यवाणिया करने लगे। यहा तक कहा जाने लगा कि देश व राष्ट्र के भाग्य भी पहले से ही ग्रहो की स्थिति से आके जा सकते है। समझदार व्यक्ति इसे वकवास ही मानते थे लेकिन सामान्य व्यक्ति इसमे विश्वास करने लगे। कई ज्योतिषी प्रभावशाली व्यक्तियो के सरक्षण मे आकाशीय पिण्डो का अध्ययन करने लगे। महाभारत व रामायण मे ऐसे भी कथन मिलते है

कि कुछ नक्षत्रो के सम्बन्ध से लोगो पर आपत्तिया आती है तथा सेनाओ व व्यक्तियो को कष्ट उठाने पडते है। फिर भी भारत मे फलित ज्योतिष का प्रचार बुद्ध के समय तक कम ही हुआ, ऐसा प्रतीत होता है। तत्कालीन भारतीयो की यह धारणा निसन्देह सही थी लेकिन इन विचारो के कारण ज्योति· शास्त्र (गणित ज्योतिष) के अध्ययन की ओर कम ध्यान दिया जाने लगा। भारत के लिए यह अच्छा नही हुआ। बौद्ध तो ज्योतिष के काफी विरुद्ध थे। कोटिल्य के अर्थ शास्त्र मे फलित ज्योतिष की निर्भरता की निन्दा की गई है। जब बौद्ध का प्रभाव कम हो गया तथा यहा विदेशी–शक, कुषाण आदि आये तब वे अपने साथ ज्योतिष का ज्ञान भी लाये। क्षत्रपो की राजधानी उज्जैन मे ज्योतिष का पठन पाठन आरम्भ हुआ। विदेश से आये शाकद्विपी ब्राह्मणो के कारण ज्योति. शास्त्र तथा फलित ज्योतिष का प्रचार हुआ। सुप्रसिद्ध ज्योतिषी––'आर्य भटीयम्' का लेखक आर्य भट्ट (ई सन् 476 के लगभग) तथा पच सिद्धान्तिका, बृहत्सहिता आदि का लेखक वराहमिहिर (ई स₹ 500–575) शाकद्विपी ब्राह्मण ही थे। शाक द्विपी ब्राह्मणो ने ही जन्म के समय की आकाशीय ग्रह स्थिति के आधार पर जन्मपत्रिया बनानी आरम्भ की। शक सवत का प्रचलन भी उनके ही द्वारा किया गया। यही कारण है कि प्रत्येक जन्मपत्री मे शक सवत अवश्य दिया जाता है। इस सवत की महत्ता को भारत सरकार ने भी आका और इसमे कुछ सशोधन कर इस सवत् को राष्ट्रीय सवत के रूप मे अगीकार किया है।

यहा पर हमारा मुख्य उद्देश्य ज्योति शास्त्र के आधार पर पचाग बनाने से सम्बन्धित है। अतः हम फलित ज्योतिष विषय के पचडे मे नही पडकर ज्योति शास्त्र (गणित ज्योतिष) के विषय मे ही लिखने जा रहे है।

भारतीय ज्योतिः शास्त्र

मनुष्य ने प्रारम्भ मे समय को तीन इकाइयो–वर्ष, माह व दिन मे बाटा। इन इकाइयो का सही माप वह कर नही सका क्योकि उस काल मे वर्तमानकाल के समान नापने के यत्र—घडिया, क्रोनोमीटर आदि नही थे। उस काल मे सूर्य, चन्द्र व तारो को देख कर ही समय का अनुमान किया जाता था। मनुष्य सर्दियो मे काम करते करते यह अनुभव करने लगा होगा कि सर्दियो के दिन गर्मियो की अपेक्षा छोटे होते है तथा राते लम्बी हुआ करती है। पूर्णिमा के चन्द्रमा को देख कर ही वह महीने का समय निश्चित नही कर सका होगा क्योकि पूर्णिमा को चन्द्रमा कुछ मिनटो क्या कई घण्टो तक एक सरीखा दिखाई देता है। अत केवल चन्द्रमा को देख कर ही समय का अनुमान नही लगाया जा सका होगा। यदि उसने महीने मे 29 या 30 दिन माने होंगे तो कुछ महीने बाद चन्द्रमा उस माने जाने वाले पूर्णिमा के दिन पूर्ण गोल नही दिखाई दिया होगा। वेध (आखो से देखी बात) व गणना मे अन्तर आ गया होगा। इसी प्रकार वर्ष मे महीनो की सख्या निश्चित की गई होगी। वर्ष मे 12 चान्द्रमासो की गणना करने के बाद मनुष्य ने देखा होगा कि नया वर्ष आरभ हो गया लेकिन वर्षा अभी तक नही हुई है। वर्षा तो होनी दूर रही, कडाके की सर्दी पड रही है। चन्द्रमासो से गणना करने पर होता भी यही है। हम देखते है कि मुसलमानी सन् हिजरी का पहला मास मुहर्रम कभी वर्षा के दिनो मे पडता है तो कभी सर्दियो मे और कभी गर्मियो मे। अत प्राचीन काल मे भी मनुष्य को यह अनुभव हुआ होगा। अब हम जानते है कि एक सौर वर्ष 365 दिन 5 घण्टा 48 मिनट 45 7 सैकण्ड का होता है। एक चान्द्र माह 29 दिन 12 घण्टे 44 मिनट 28 सैकण्ड का होता

है। एक सौर दिवस 23 घण्टे 56 मिनट 4 091 सैकण्ड का होता है। इन दिनो व महीनो का प्राचीन काल मे वर्ष से किसी प्रकार मिलान किया गया होगा। इसके क्या नियम थे, यह कुछ नही कहा जा सकता क्योकि किसी भी प्राचीन ग्रन्थ मे इसके नियम नही मिलते हैं। यह हम जानते है कि सूर्य के दर्शन से दिन का आरम्भ और छिपने मे रात्रि का क्रम चलता आया है। दिन और रात को छ-छ भागो को 'लग्न' मे या कभी बारह भागो को होरा (अहोरात्र) मे विभक्त किया गया है। यो दिन को दो भागो मे पूर्वाह्न और पराह्न, तीन भागो मे पूर्वाह्न, माध्याह्न और पराह्न, चार भागो मे पूर्वा-मध्याह्न, अपराह्न, और सायाह्न (चार पहर), पाच भागो मे— प्रात, सगव, मध्याह्न, अपराह्न और सायाह्न मे बाटा गया। अहो रात्र को 24 भागो मे विभाजित करने पर प्रत्येक भाग को होरा (घण्टा) कहते है। होरा का साठवा भाग विहोरा (मिनट), 3600 वा भाग प्रति विहोरा (सैकण्ड) कहलाता है। एक अहोरात्र का तीसवा भाग मुहुर्त, साठवा भाग घटी, 3600 वा भाग पल तथा 3600 × 60 वा भाग विपल और 3600 × 60 × 60 वा भाग प्रति विपल कहलाता है।

ऋग्वेद

ससार की प्राचीनतम पुस्तको मे ऋग्वेद माना जाता है। इसकी रचना ई पू 1200 के लगभग हुई थी। ऋग्वेद-कालीन आर्य यज्ञो के लिये प्रसिद्ध थे। उनके यज्ञ ऋतुओ के अनुसार होते थे और कई यज्ञ तो वर्ष भर चलते थे। अत इसमे कोई सन्देह नही कि वे अवश्य ही कोई न कोई तिथिपत्रक का प्रयोग करते रहे होगे। उस समय वर्ष मे बारह मास और हर मास मे 30 दिन माने जाते थे। ऋग्वेद मे एक स्थान पर लिखा है कि समय के चक्र के 12 अरे (मास) है जो स्वर्ग मे बराबर भ्रमण करता रहता है। यह कभी भी पुराना नही होता है। इस चक्र मे पुत्रस्वरूप 720 (360 दिन और 360 रात्रियाँ) निवास करते हैं (ऋग्वेद 1/164/11)। इससे यही अर्थ लिया जाता है कि एक वर्ष मे 12 मास और 360 दिन होते हैं। एक अन्य मन्त्र मे चक्र के 12 अरो का 3 नभयानि से विभाजित बतलाया गया है। इसमे 360 शकु है जो कभी ढिले नही होते है (ऋग्वेद 1/164/48)। यह मत्र बतलता है वर्ष के 12 महीने 3 ऋतुओ मे विभाजित थे। ये 12 मास चान्द्रमास थे क्योकि इन चान्द्रमासो को सौर वर्ष से मिलाये रखने के लिये उन्हे एक अधिमास की भी कल्पना करनी पडी थी जैसा कि ऋग्वेद (1/25/8) मे उल्लेख है—

वेद मासो धृतव्रतो द्वादश प्रजावतह वेदाय उपजायते

यह अधिमास किस प्रकार गिना जाता था यह स्पष्ट नही है। महीनो के क्या नाम थे इसका भी उल्लेख नही मिलता है। दिनो का उल्लेख सम्भवत नक्षत्रो द्वारा करते थे।

यजुर्वेद

ऋग्वेद के बाद ई पूर्व 600 के लगभग यजुर्वेद की रचना हुई। इसमे वर्ष के 12 महिनो के नाम दिये गये है। वे है— मधु, माधव, शुक्र, शुचि, नभ, नभस्य, इश, उर्ज सहस, सहस्य, तपस और तपस्या (तैत्रीय सहिता 4/4/11)। ये मास सौर थे। इसमे सूर्य के उत्तरायण व दक्षिणायन होने तथा

विपुवान का उल्लेख है। नक्षत्रो की भी पूर्ण सूची दी हुई है। इन नक्षत्रो के निकट पूर्णमासी होने से ही बाद मे उन नक्षत्रो के नाम पर महिनो के नाम पड़े। यो नक्षत्र 27 होते है लेकिन समयान्तरो का विचार कर 12 नक्षत्रो के नाम पर महिनो के नाम दिये गये। तिथियो का भी उल्लेख किया गया है। प्रत्येक पक्ष मे 15 तिथिया होती थी। शुक्ल पक्ष मे तिथि एक चन्द्रास्त से दूसरे चन्द्रास्त तक तथा कृष्ण पक्ष मे एक चन्द्रोदय से दूसरे चन्द्रोदय तक गिनी जाती थी (ऐत्रेय ब्राह्मण 32/10)।

वेदांग ज्योतिष

यजुर्वेद के बाद हमे वेदाग ज्योतिप मे तिथिपत्रक बनाने के प्रारम्भिक नियम मिलते है। वेदांग ज्योतिप प्राचीन काल से ही एक पवित्र ग्रन्थ माना जाता रहा है। इसके दो पाठ—ऋग्वेद ज्योतिप और यजुर्वेद ज्योतिष—मिलते है। इसमे कुल 44 श्लोक है लेकिन इनमे से 37 श्लोक ही ज्योतिप सम्बन्धी है। इसका रचना-काल का समय निश्चित नही है। कई विद्वान 1200 ईसा पूर्व बतलाते है तो कई ई सन् 300 के लगभग बतलाते है।

इसमे बतलाया गया है कि समय गणना की 3 प्राकृतिक इकाइया— अहोरात्र (दिन रात), चान्द्र-मास और वर्ष—है। पृथ्वी के अपने अक्ष पर परितः एक बार घूमने से अहोरात्र होता है। एक पूर्णिमा से आगामी पूर्णिमा तक एक चान्द्रमास होता है। चान्द्रमास पृथ्वी के परित. चन्द्रमा के परिक्रमण के कारण होता है। सूर्य पृथ्वी के परित' चक्कर लगाता हुआ दिखाई देता है। एक चक्कर का समय एक वर्ष होता है और ऐसे पाँच वर्षो का एक युग होता है। एक युग मे 62 चान्द्र-मास या 1860 चान्द्र-दिन या 60 सौर-मास या 1830 सावन-दिन बताये गये है। दो चान्द्रमासो के सौर-मासो से ज्यादा होना 5 वर्षो मे 2 अधिमासो की गणना के फलस्वरप है। इस गणना मे एक चन्द्रमास मे 29 516 दिन तथा एक वर्ष मे 2366.2 दिन होते है। यह मान आधुनिक खोजो के अनुसार सही नही है क्योकि एक चान्द्र-मास 29.530588 दिन का और एक वर्ष 365 242196 दिन का होता है। यदि हम वेदाग ज्योतिप के अनुसार चान्द्र-मास 2 516 दिन को माने तो 20 वर्षो मे 3 5 दिन की अशुद्धि बढ जावेगी और 20 वर्षो के बाद की अमावस्या के दिन आकाश मे चन्द्रमा दिखाई देगा। इसके अतिरिक्त इसमे सब तिथिया बराबर मानी गई है, लेकिन वास्तव मे सूर्य और चन्द्रमा आसमान मे कोणीय वेग से चलते है और इससे तिथिया छोटी बडी होती है और उनकी गणना के अलग से नियम है। इसमे काल, मुहूर्त, ऋतु-विशेप आदि की भी परिभापाएँ दी गयी है। तिथियो के क्षय का भी इसमे उल्लेख है। एक चान्द्र-मास 29 516 दिन का होता है, लेकिन एक मास मे 30 तिथिया होती है। अत दो चान्द्र-मासो मे 59 दिन और 60 तिथिया होती है। इससे लगभग 2 महिनो मे औसतन एक तिथि का क्षय होता है। यदि ऐसा न करें तो तिथियो और मासो का सम्बन्ध टूट जावेगा। इसमे यह भी बतलाया गया है कि पूर्णिमा या अमा-वस्या पर चन्द्रमा किस स्थान पर रहता है तथा नक्षत्र मे सूर्य के स्थान का पता कैसे लगाया जावे। तीन श्लोको मे विपुव (वह समय जब कि सूर्य विपुवत रेखा पर पहुँचता है और दिन व रात बराबर होते है) की गणना करना बतलाया गया है। एक श्लोक मे योग का पता लगाना बतलाया गया है। योग सूर्य और चन्द्रमा के योगाशो का जोड है। इन जोडो की कमी-वेशी को विशेप नाम दिये गये है। एक श्लोक

मे 27 नक्षत्रो को एक विशेष क्रम मे बतलाया गया है। इसमे जो कुछ त्रुटिया रह गयी है उनमे वेध और गणना मे काफी अन्तर रहता है। अत मास और वर्ष को ठीक रखने के लिए सम्भव है बाद मे कुछ अन्य नियम बनाये गये होगे। ये नियम क्या थे, वे अप्राप्य है।

वेदाग ज्योतिप के अनुसार काल गणना ई सन् 200 तक चलती रही। यो ईसा पूर्व 500 व ई. सन् 100 के बीच शको व कुषाणो ने यूनानी पद्धति पर समय गणना आरम्भ कर दी थी। इसके पूर्व भी भारतीय यूनानियो के सम्पर्क मे आते रहे थे लेकिन तब ज्योतिप विज्ञान मे यूनानी इतने पारगत नही थे। तब वे भी ज्योतिप ज्ञान के लिये मिश्र व बाबुलवासियो का ही मुह ताकते थे। ई पू 150 के लगभग भारत तथा यूनान, जिसमे बाबुल भी था, के सम्बन्ध, बीच मे पार्थियन सामाज्य के स्थापित हो जाने से लगभग समाप्त हो गया। यो पार्थियन भी अपने को यूनानी सस्कृति का प्रेमी बतलाते थे, लेकिन तब भारतीयो का शक व कुषाण राज्यो से ज्यादा सम्पर्क बढ गया। इस समय मे पश्चिमी ज्योतिष का भारत मे मुख्य केन्द्र उज्जैन था जो पश्चिम क्षत्रपो की राजधानी थी। पश्चिमी क्षत्रपो ने ही तब लगातार समय गणना के लिए शक सवत् प्रचलित किया। ऐसी भी किवदन्ती है कि भारत मे ज्योतिष का ज्ञान शाकद्विपी ब्राह्मण लाये जो मध्य एशिया से आये थे। इनको सूर्य का इष्ट था। इसी कारण तत्कालीन सूर्य मूर्तियो के जूते मध्य-एशिया के बादशाहो की भाँति ऊचे बनाये जाते थे। भारत के प्रसिद्ध ज्योतिपि आर्यभट्ट और वराहमिहिर शाकद्विपी ब्राह्मण थे।

पांच सिद्धान्त

वराहमिहिर ने ई सन् 550 के लगभग 'पच सिद्धातिका' लिखी जिसमे तत्कालीन प्रचलित पाच सिद्धांतों का वर्णन किया है। वे सिद्धान्त है—पितामाह, वसिष्ठ, रोमक, पुलिश और सूर्य।

पितामह सिद्धान्त के अनुसार 30 महिनो मे एक अधिमास होता है और 62 दिनो मे एक तिथि का क्षय होता है। यह वेदाग ज्योतिप से काफी मिलता जुलता है।

वसिष्ठ सिद्धान्त बहुत कुछ पितामह सिद्धान्त की तरह ही है परन्तु उमसे कई बातो मे अधिक शुद्ध है। इसमे राशियो की चर्चा हे तथा तिथि और नक्षत्र की गणना की रीति बतलाई गई है जो ठीक नही है। वरामिहिर ने वसिष्ठ सिद्धान्त और पितामाह सिद्धान्त को निम्नतम श्रेणी का बतलाया है।

रोमक सिद्धान्त श्रीषेण ने बनाया था। यह सिद्धान्त यवन ज्योतिष पर आश्रित था। इसमे वर्ष का मान 365 2467 दिन का तथा 19 वर्षो मे 7 अधिमास माने गये है। रोमक सिद्धान्त मे कोई मौलिकता नही है। केवल यवन ज्योतिष व भारतीय ज्योतिप का मेल बैठा कर नया नाम दिया गया है।

पुलिश सिद्धान्त बहुत ही महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। इसमे वर्ष 365 दिन 6 घण्टे 12 मिनट का माना गया था। इसमे उज्जैन और बनारस से यवनपुर (अलेक्जैण्ड्रिया) के देशान्तर दिये है। इसमे

ग्रहणो की गणना के लिए भी नियम दिये गये है। मास के प्रत्येक दिन को देवताओं के नाम दिये गये हैं। दिन को देवताओ के नाम देना पूर्णतया ईरानी पद्धति है लेकिन दिन को देवताओ के जो नाम इसमे दिये गये है वे सब भारतीय देवता है।

सूर्य सिद्धान्त ईसवी सन् 400 के लगभग बना। वेदाग ज्योतिष के बाद का ज्योतिष सबधी ज्ञान का यह सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसके आधुनिक रूप मे 14 अधिकार अर्थात् अध्याय है तथा इसमे कुल 500 श्लोक है। इसमे समय की छोटी से छोटी इकाइया दी गई है लेकिन इन इकाइयों का नाप किस यन्त्र से किया जाता था, यह स्पष्ट नही है। एक वर्ष को देवताओ का एक दिन बताया गया है जो 4,32,00,00,000, वर्ष का होता है। ऐसे 360 दिनो को ब्रह्मा का एक वर्ष कहा गया है।

इस ग्रन्थ मे सूर्य, चन्द्रमा और ग्रहों के भगण काल भी दिये हैं। सूर्य का भगण काल 365 दिन 6 घण्टे 12 मिनट 36.56 सैकन्ड तथा चन्द्रमा का 27 दिन 7 घण्टा 43 मिनट 2 6 सैकण्ड बतलाया गया है जो आधुनिक ज्योतिष के अनुसार काफी ठीक है। इसमे यह भी बतलाया गया है कि एक युग मे कितने अधिमास होते हैं और कितनी तिथियो का क्षय होता हैं। सृष्टि के आरम्भ से किसी समय तक के दिनो की संख्या कैसी जानी जा सकती है, यह भी इसमे बतलाया गया है। सूर्य, चन्द्रमा, मगल आदि का स्पष्ट स्थान ज्ञात करने की रीति भी इसमे बतलाई गई है। इसमे सूर्य का व्यास 6500 योजन, चन्द्रमा का 480 योजन तथा पृथ्वी का 1600 योजन बतलाया गया है। चन्द्रमा का व्यास आधुनिक वेधो के अनुसार ठीक है लेकिन सूर्य का व्यास बहुत अशुद्ध है। सूर्य सिद्धान्त के अनुसार सूर्य का व्यास पृथ्वी के व्यास से लगभग चौगुना है। लेकिन आधुनिक वेधो के अनुसार सूर्य का व्यास पृथ्वी के व्यास के 100 गुने से भी कुछ अधिक है। सूर्य ग्रहण के लिए बतलाया गया है कि सूर्य के नीचे आ जाने पर चन्द्रमा उसको बादल की तरह ढक लेता है तथा चन्द्रग्रहण के लिए बतलाया गया है कि पूर्व की ओर भ्रमण करता हुआ चन्द्रमा भू-छाया मे प्रवेश कर जाता है तब चन्द्रमा का ग्रहण लगता है। कौन ग्रहण कब, कैसे और कितना होगा, यह भी इसमे बतलाया गया है।

सूर्य-सिद्धान्त के सातवें अध्याय में बतलाया गया है कि ग्रह एक दूसरे के निकट कब और कहा दिखाई देते है और इनका शुभाशुभ फल क्या होता है। आठवें अध्याय मे नक्षत्रो और कुछ विशेष तारो की स्थितिया दी गई है। नवे अध्याय मे बतलाया गया है कि सूर्य के निकट जाने के कारण ग्रह कब अस्त और उदय होते है और इनकी गणना कैसे की जावे। इसमे बतलाया गया है कि चन्द्रमा सूर्य से 12 अंश से कम की दूरी पर रहता है तो अदृश्य रहता है। ग्यारहवे अध्याय मे बतलाया गया है कि जब सूर्य और चन्द्रमा की क्रान्तिया बराबर होती है तब विपत्ति की आशंका होती है। ऐसे अवसरो की गणना रीति भी बतलाई गई है। इसके तेरहवे अध्याय में ज्योतिष-यन्त्रो को बनाने की रीति बतलाई गई है लेकिन ये यन्त्र वह स्वय बना पाया या नही, यह सदेहास्पद है क्योकि इसमे दी गई रीति से बनना असम्भव प्रतीत होता है। इसके अन्तिम (14 वे) अध्याय मे समय की विविध इकाइयो और विशेष प्रकार के समयो—सौर सावन, चान्द्र, नक्षत्र आदि— का वर्णन किया गया है।

सूर्य सिद्धान्त मे समय-समय पर सशोधन होते रहे। अत प्रचलित सूर्य सिद्धान्त प्राचीनतम सूर्य सिद्धान्त से भिन्न है। सूर्य-सिद्धान्त का मूल पाठ ई सन् 400 के लगभग लिखा गया और उसमे ई सन् 1100 तक परिवर्तन होते रहे।

भारत मे तिथिपत्रक सूर्य-सिद्धान्त मे दिये वर्षमान के अनुसार बनाये जाते है। उसके अनुसार सौर वर्ष 365 दिन 6 घण्टा 12 मिनट 36 सैकण्ड का होता है लेकिन वह वास्तव मे 365 दिन 5 घण्टा 48 मिनट 45.7 सैकण्ड का होता है। अत· वर्ष का आरम्भ वास्तव मे प्रति वर्ष 23 मिनट 51 सैकण्ड पहले आरम्भ होता है। भारतीय पंचागो मे इस गणना से पिछले 1400 वर्षो मे लगभग 23·2 दिन आगे निकल गया है। इससे भारतीय सौर-वर्ष जो वसन्त विपुव के पश्चात् 22 मार्च को आरम्भ होना चाहिये था, अब 13या 14 अप्रेल से आरम्भ होता है। इसी प्रकार की अशुद्धि पहले ईसवी सन् के तिथिपत्रक मे भी रहा करती थी जो बाद मे पोप ग्रेगरी के आदेश से दूर की गई। भारत सरकार ने भी इन्ही कारणो से अब सौर वर्ष का आरम्भ 22 मार्च से करने का आदेश दिया है और ई सन् 1957 से राष्ट्रीय पचाग का शक सवत इसी तिथि से आरम्भ होने लगा है।

एक सक्राति से दूसरी सक्रान्ति तक से समय को सौर मास कहते है। सौर वर्ष का प्रारम्भ मेप की सक्रान्ति से होता है। सूर्य जिस राशि मे होता है उसी के नाम से उस सौर मास का नामकरण होता है। मेष सौर मास को वैशाख, वृप सौर मास को ज्येष्ठ, मिथुन सौर मास को आषाढ भी कहते है। इसी प्रकार और महिनो के नाम है।

सौर महिनो की लम्बाई मे प्रत्यक्ष वेध से काफी अन्तर—11 5 घण्टो तक—रहता है। अत वर्तमान पचाग बनाने वाले ज्योतिपियो के लिए यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि वे अब सूर्य-सिद्धाँत के अनुसार पचाग न बना कर वर्तमान वेधो के अनुसार बनावे।

ब्राह्मस्फुट सिद्धान्त

सूर्य-सिद्धात के बाद का गणित ज्योतिष का अति प्रसिद्ध ग्रथ 'ब्राह्मस्फुट सिद्धात' है जिसकी रचना ई. सन् 628 मे ब्रह्मगुप्त ने की। उसने इसकी रचना ग्रहो के प्रत्यक्ष वेध कर के की थी और वह इस बात की आवश्यकता समझता था कि जब कभी गणना और वेध मे अन्तर पडने लगे तो वेध के द्वारा गणना शुद्ध कर लेनी चाहिए।

सिद्धान्त शिरोमणि

ज्योतिष सिद्धात का एक अन्य महत्वपूर्ण ग्रन्थ 'सिद्धात शिरोमणि' है। इसमे ज्योतिप सिद्धात की सभी बाते विस्तार और उपपत्ति के साथ बताई गई है। सिद्धात शिरोमणि की रचना ई सन् 1150 मे भास्कराचार्य द्वितीय ने की। यह दो भागो— गणिताध्याय तथा गोलाध्याय—मे है। इसके अनुसार सौर-वर्ष 365 दिन 15 घटी 30.73 पल अर्थात् 365 दिन 6 घण्टा 11 मिनट 57-12 सैकण्ड का होता है।

भास्कराचार्य ने गणित ज्योतिष का पर्याप्त विस्तार किया और उपपत्ति सम्बन्धी बातो पर काफी ध्यान दिया । उसने आकाश के प्रत्यक्ष वेध से बहुत कम काम लिया । वेधो के लिए उसने ब्राह्मस्फुट सिद्धात को ही आधार माना ।

पचाग बनाते वक्त प्रत्येक ज्योतिषी उपरोक्त सिद्धान्तो मे से किसी न किसी सिद्धान्त का पालन करता है । इन सभी सिद्धान्तो का मूल सिद्धान्त एक ही है । उनमे भिन्नता है तो केवल गणना करने मे समय के नाप की । उदाहरणार्थ महाराष्ट्र और उत्तर भारत के पचागो मे भिन्नता का कारण यह है कि वे अश्विनी नक्षत्र और मेष राशि का आदि विन्दु सूर्य सिद्धान्तीय मेष राशि के आदि विन्दु से 4 अ श के लगभग पहले मानते है । इस कारण महाराष्ट्र मे मेष सक्राति 4 दिन के लगभग पहले ही मान ली जाती है । इससे अधिक मासो मे वडी भिन्नता रहती है । पचागों की विभिन्नता के कारण राष्ट्रीय और ऐतिहासिक घटनाओ की तिथियो का निश्चय करने मे काफी कठिनाई की जाती है । ज्योतिषियो की यह धारणा ठीक नही है कि 'सूर्य-सिद्धान्त' ही आर्ष ग्र थ है अत. जितनी गणना हो वह सब सूर्य-सिद्धान्त ही के अनुसार ही हो क्योकि इसका कोई प्रमाण नही है कि सूर्य-सिद्धान्त वास्तव मे मूल रूप मे क्या था और कालान्तर मे उसमे क्या क्या सशोधन हुए है । यदि मध्यकालीन ज्योतिषी सूर्य-सिद्धान्त को आर्ष ग्र थ मानते तो वे अन्य नये ग्र थ लिखकर सूर्य-सिद्धान्त से भिन्न मत का प्रचार न करते ।

भास्कराचार्य वाद लगभग 400 वर्षो तक कोई विशेष उल्लेखनीय ज्योतिषी नही हुआ । लोगो का ध्यान ज्योतिषो की ओर कम गया और इसके फलस्वरुप वडी-वडी भूले होने लगी। ई. सन् 1730 के लगभग जयपुर नरेश सवाई जयसिह ने देखा कि वेध और गणना मे काफी अ तर आने लगा है अत. उसने ज्योतिष की गलतियो को दूर करने के लिए जयपुर, दिल्ली, बनारस, तथा उज्जैन मे वेधशालाये बनवाई तथा इसमे यन्त्र पत्थरो के बनवाये । ये 'यन्त्र मन्दिर' अब सर्वत्र 'जतर-मतर' के नाम से प्रसिद्ध है । इन वेधशालाओ मे बहुत कुछ उपयोगी कार्य हुआ । स्वय जयसिह कुशल ज्योतिषी था । उसने स्वय यूरोप की प्रचलित तारासूचियों मे कई भूले निकाली । उसने कई ज्योतिषियो को राज्याश्रय दिया, तथा ज्योतिष के काम को आगे बढाया ।

ज्योतिष मे अनुसन्धान कार्य बराबर चल रहा है । भारत सरकार ने भी वेधशालाये स्थापित की हैं जो आधुनिकतम यत्रो से सुसज्जित हैं तथा अपनी रिपोर्टें बराबर प्रकाशित करती रहती है । अब भारत सरकार द्वारा प्रति वर्ष पचांग भी प्रकाशित हो रहा है । तारो के सम्बन्ध मे अनुसन्धान कार्य भी बराबर चलता रहता है ।

भारतीय ज्योतिष पर विदेशी प्रभाव

भारतीय ज्योतिष ज्ञान का रोक्त विवरण देते यह बतला देना भी आवश्यक है कि ज्योतिष का यह ज्ञान भारतीयो ने किससे सीखा । कई पाश्चात्य विद्वानो का मत है कि भारत मे यह ज्ञान विदेशो से आया लेकिन यह मत पूर्णतया ठीक नही है । ज्योतिष ज्ञान मे, यह कोई सन्देह नही कि यूनानी काफी बढे-चढे थे । हिन्दू सिद्धान्तो मे कुछ भी ऐसी वस्तु नही है जो यूनानी ज्योतिषि टालेमी (ई सन् 140 के

लगभग) की महान कृति 'सिनटेक्सिस' की टक्कर की हो लेकिन यह कहना सत्य नही है कि भारतीय ज्योतिप सिद्धान्त मौलिक नही है। इसके कई प्रमाण है कि भारतीय ज्योतिपी अरब देशो मे गये और अपने साथ ग्रहो की सारिणिया चान्द्र तथा सौर ग्रहणो के वेध और राशियो के निर्देशाक भी ले गये। अत अरब वालो ने ज्योतिप का ज्ञान भारतीयो से लिया। इसमे कोई सन्देह नही कि विपुव के वार्षिक अयन के मान मे पृथ्वी के सापेक्ष सूर्य और चन्द्रमा के नापो मे, सूर्य के महत्तम केन्द्र-समीकार मे यवनो की अपेक्षा हिन्दू ही अधिक शुद्ध थे और ग्रहणो के भगण कालों मे वे प्राय उतने ही सही थे जितने यवन। ग्रहो के नक्षत्र भगण कालो की तुलना से स्पष्ट हो जाता है कि चार भगण काल हिन्दुओ के अधिक शुद्ध थे और टालमी के छ। प्रत्यक्ष है कि हिन्दुओ और यवनो के बीच ज्योतिष ज्ञान का आदान-प्रदान बहुत ही कम हुआ (डा गोरख-प्रसाद रचित भारतीय ज्योतिप का इतिहास पृ 171)। ज्योतिप ज्ञान के विषय मे कोलब्रुक ने अपनी उचित ही सम्मति दी है—'मुझे इसी परिणाम पर पहुँचना उचित जान पडता है कि इस बात मे भारतीय शिक्षक थे न कि शिक्षुक' (ट्राजेक्शन्स ऑफ रायल एशियाटिक सोसायटी 1/579)

चान्द्र तथा चान्द्र–सौर काल गणना

आकाश मे सूर्य का पथ तथा समय बिल्कुल निश्चित है। सौर वर्ष आज से लगभग 3000 वर्ष पूर्व 365 2425 दिनो का होता था और अब 365 2422 दिनो का होता है। इतने वर्षो मे 0003 दिन अर्थात् 3300 वर्षो मे केवल 1 दिन का अन्तर नगण्य है। अत समय गणना के लिये सौर वर्ष बहुत ही अच्छा साधन है लेकिन प्राचीन काल मे मिश्र ही एक ऐसा देश था जिसने समय गणना के लिये सौर पचाग अपनाया था।

एक अमावस से दूसरी अमावस अथवा एक पूर्णिमा से दूसरी पूर्णिमा तक के समय को चान्द्रमास कहते है। पहले को अमान्त चान्द्र मास और दूसरे को पूर्णिमान्त चान्द्र मास कहते हैं। चान्द्र मास का मान 29 246 से 29 817 दिनो (लगभग 14 घण्टो का अन्तर) तक का होता है। यो चान्द्र मास का औसत समय 29 530588 दिनो (29 दिन 12 घण्टा 44 मिनट 2.86 सैकण्ड) का होता है। चान्द्रमास का एक निश्चित मान नही होने के कारण ज्योतिपियो के लिए एक कठिन समस्या बनी हुई है। इस समस्या को दूर करने के लिये सौर वर्प के मान तथा चन्दमा के मध्यक सयुति काल की गणना कर चान्द्र व सौर समयो का समायोजन किया गया है। इसके लिए यह हिसाब लगाया गया कि 19 सौर वर्षो मे 6939 60 दिन होते हैं तथा 365 चान्द्र मासो मे 6939 69 दिन होते है, अर्थात् इनमे केवल .09 दिन (75 96 सैकण्ड) अर्थात् 210 वर्षो मे 1 दिन का अन्तर रहता है। 235 चान्द्र मासो मे 19 वर्ष 7 महिने होते हैं। इन 7 अधिक मासो को 19 वर्षो के चक्र मे इस नियम से लगाया गया है कि चान्द्र मासो से गणना करने पर भी सौर वर्षो से मेल बैठ जाता है। सामान्यत एक अधिक मास 32 महिना 16 दिन और 4 घटी के अतर पर पडता है। अधिमासो की गणना हमारे यहा वैदिक काल से चली आ रही है।

वेद मासो घृतव्रतो द्वादश प्रजावतह वेदाय उपजायते

(ऋग्वेद 1/25/8)

घृतव्रत (वरुण) 12 महिनो को जानता है और वह 12 महिनो से लगे अधिमास को भी जानता है।

अधिमासो की गणना के नियम अन्य देशो—बाबुल, यूनान आदि मे भी बने हुये थे। अत प्राचीन काल से ही भारत, यूनान, रोम आदि मे चान्द्र सौर पचाग अपनाया गया था ।

अधिक मास और क्षय मास

सौर मास की गणना वाले वर्ष मे लगभग 365 दिन 6 घण्टे होते है लेकिन चान्द्र मास वाले वर्ष मे लगभग 354 दिन 9 घण्टे होते है इस कारण कभी कभी किसी सौर मास मे दो चान्द्र मास आ जाते है। ऐसे दोनो मासो का नाम सौर मास वाला होगा लेकिन प्रथम चान्द्र मास अधिमास व बाद वाला शुद्ध या निज मास कहलाता है।

अधि मास को मलमास, ससर्प, अंहसस्पति, पुरूषोतम मास आदि भी कहते हैं। मलमास कहलाने का कारण इसे काल का मल समझना है। जब एक वर्ष मे दो अधिमास हो और एक क्षय मास हो तो दोनो अधिमासो मे प्रथम संसर्प कहा जाता है। यह मास विवाह को छोडकर अन्य धार्मिक कृत्यो के लिए निन्द्य माना जाता है। अहसस्पति क्षय मास तक सीमित है। अहसस्पति का शाब्दिक अर्थ है—'पाप का स्वामी'। कुछ पुराणो मे अधिमास को पुरूषोत्तम मास कहा गया है। विष्णु को पुरुषोत्तम कहा जाता है। सम्भव है कि अधिमास की निन्द्यता को कम करने के लिये इसे यह नाम दिया गया हो।

जिस मास मे दो सक्रातियां होती है और जिसमे चन्द्रोदय नही होता है वह मास क्षय मास कहलाता है। क्षय मास के पूर्व तथा बाद के 6 महिनो में अधिमास अवश्य होता है। क्षय मास कभी 141 वर्ष मे तो कभी 19 वर्ष मे भी पड़ जाता हे।

अधिमास सभी चन्द्रमासो मे, सिवाय पोप व माघ के, हो सकते हैं लेकिन क्षय मास मार्गशीर्ष, पोप व माघ मे ही हो सकते है।

राशि व संक्रान्ति

आकाश में सूर्य तारो के बीच दीर्घ वर्त्ताकार जिस मार्ग से परिक्रमा करता है वह क्रातिवृत्त कहलाता है। आकाश मे सूर्य का पथ बिल्कुल निश्चित है लेकिन चन्द्रमा व अन्य ग्रह इस क्रातिवृत्त से 9 अश उत्तर और 9 अंश दक्षिण तक हट जाते है। अतः क्रातिवृत्त से 9 अंश उत्तर और 9 अश दक्षिण तक की एक अण्डाकार मेखला (बेल्ट) की कल्पना ज्योतिपियो द्वारा की गई है जो राशिचक्र कहलाता है। इस मेखला का चक्र 30-30 अशो के 12 भागो मे बाटा गया है। प्रत्येक 30 अंश का भाग राशि कहलाता है। जब सूर्य एक राशि अर्थात क्रांतिवृत के 30 अंश की परिक्रमा समाप्त कर दूसरी राशि मे प्रवेश करता है तब संक्राति कहलाती है। जहा क्रांतिमण्डल और विपुवदवृत मिलते हैं वह राशि इसमे के तारा समूह के नाम से मेप कहलाती है। इसके बाद मे निम्न राशिया क्रमानुसार आती हैं—वृषभ,

मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन । इन तारो के समूहो की जैसी शक्लें है वैसे ही उनके नाम दिये गये है । ये सभी नाम यूनानी ज्योतिष से लिये गये है । यूनानियो ने ये नाम बाबुल ज्योतिष से लिये ।

सूर्य का विभिन्न राशियो मे प्रवेश, यानि सक्रान्ति, दिन के किसी समय हो सकती है । ज्योतिष के अनुसार सौर माह उसी वक्त आरम्भ हो जाता है और आगामी सक्राति तक रहता है लेकिन लौकिक प्रयोजनो के लिये मास उस दिन के सूर्योदय से प्रारम्भ होना चाहिए या उसके बाद वाले दिन से इसके लिए अलग-अलग नियम है, जो इस प्रकार है—

बगाल मे यदि सक्राति सूर्योदय व अर्धरात्रि के बीच के समय हो तो अगले दिन, यदि वह अर्धरात्रि के बाद हो तो उसके तीसरे दिन सौर माह प्रारम्भ होता है । यदि संक्राति अर्धरात्रि के 24 मिनट पहले या बाद मे हो तो सूर्योदय की तिथि को देख कर गणना की जाती है । यदि कर्क सक्राति अर्धरात्रि के 48 मिनटो मे पड जाती है तो महीना अगले दिन आरम्भ होता है और यदि मकर सक्राति उस समय मे होती है तो महीना तीसरे दिन आरम्भ होता है । अन्य सक्रातियो मे यदि सूर्योदय की तिथि सक्राति के क्षण तक रहे तो वह महीना अगले दिन से प्रारम्भ होता है लेकिन यदि तिथि सक्राति के पहले समाप्त हो जाती है तो वह महीना तीसरे दिन आरम्भ होता है । उडीसा मे सक्राति के दिन ही महीना आरम्भ हो जाता है । तामील नाड मे यदि सक्राति सूर्योदय के पहले हो तो महीना उस दिन ही आरम्भ हो जाता है लेकिन यदि सूर्यास्त के बाद हो तो महीना अगले दिन आरम्भ होता है । केरल मे यदि सक्राति सूर्योदय व मध्यान्ह के बीच हो तो महीना उस दिन आरम्भ हो जाता है अन्यथा अगले दिन आरम्भ होता है ।

अमान्त और पूर्णिमान्त

भारत के तिथिपत्रको मे चान्द्र मासो का प्रयोग दो प्रकार—अमान्त और पूर्णिमान्त से होता है । अमान्त या मुख्य चन्द्रमास शुक्ल पक्ष से आरम्भ होता है और अगले शुक्ल पक्ष के आरम्भ तक रहता है । इसमे महीनो का वही नाम होता है जो सौर मास का होता है । चान्द्रमास सौर मास के किसी दिन प्रथम दिन से अन्तिम दिन तक से आरम्भ हो सकता है ।

पूर्णिमान्त या गौण चन्द्रमास पूर्णिमा के अन्त होने पर आरम्भ होता है और आगामी पूर्णिमा तक रहता है । यह अमान्त माह के नये चान्द्र उदय से एक पक्ष पहले आरम्भ हो जाता है और इसका नाम उस महीने के नाम से ही होता है । यह माह पूर्ववर्ती सौर माह के आखरी पक्ष और उस सौर माह के प्रथम पक्ष के किसी दिन से आरम्भ हो सकता है । पूर्णिमा से नये चन्द्र तक का समय कृष्ण पक्ष या वदि कहलाता है तथा नये चन्द्र से पूर्णिमा तक का समय शुक्ल पक्ष या सुदि कहलाता है ।

चैत्रादि सवत् चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से, आषाढी सवत् आषाढ शुक्ला प्रतिपदा से तथा कार्तिकी सवत् कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा से आरम्भ होते है । राजस्थान, पजाब, उत्तर प्रदेश आदि उत्तर भारत के राज्यो मे पूर्णिमान्त और गुजरात, महाराष्ट्र आध्र, तमिलनाडु आदि दक्षिण राज्यो मे अमान्त चन्द्रमास का प्रचलन है ।

अमावस्या से दूसरी अमावस्या तक एक क्राति वृत के 360 अंश पूर्ण हो जाते है। एक तिथि औसतन 23 घण्टा 37 मिनट 30 सैकण्ड तक रहती है। वह ज्यादा से ज्यादा 26 घण्टा 47 मिनट और कम से कम 19 घण्टा 59 मिनट तक रहती है। अत कभी-कभी तिथि एक सौर दिन मे ही आरम्भ होकर समाप्त हो जाती है। ऐसी तिथि क्षय तिथि कहलाती है और उसके बाद वाले दिन अगली तिथि गिनी जाती है। उदाहरणार्थ, यदि सूर्योदय के समय तिथि चौथ थी लेकिन उस दिन सूर्योदय के बाद पचमी आरम्भ होकर दूसरे दिन के सूर्योदय के पहले ही वह समाप्त हो गई तो आगामी दिन सूर्योदय की तिथि छठ होगी और तिथिपत्रक मे इस क्रम से लिखी जावेगी 3, 4, 6, 7 आदि। पचमी लिखी ही नही जावेगी। कभी-कभी एक तिथि दो सूर्योदय तक चलती है। उदाहरणार्थ, यदि चौथ की तिथि सूर्योदय से आरम्भ होकर दूसरे दिन के सूर्योदय तक रहे तो दोनो दिन चौथ मानी जावेगी। तिथिपत्रक मे तब तिथियां 3, 4, 4, 5 आदि के क्रम से लिखी जावेगी।

तिथियो का घटना-बढना चन्द्रमा और सूर्य के भोगाँश के समान गति से नही बढने के कारण होता है। यो चन्द्र मास लगभग 29 50 दिन का होता है और उसमे 30 तिथिया होती है। अत अधिकतर तिथियो का क्षय ही होता है।

पंचागों मे समय की इकाई घटी मे दी जाती है। एक घण्टा मे 2।। घटी होती है। एक घटी मे 60 पल और एक पल मे 69 विपल होते है। अत यदि किसी तिथि से सामने घटी व पल लिखे हो तो समझना चाहिए कि वह तिथि सूर्योदय के इतने घटी व पल के बाद समाप्त हुई।

पंचागो मे सक्रातियो के सामने भी घटी व पल लिखे जाते है जिसका अर्थ होता है कि वह सक्राँति इतने घटी व पल पर आरम्भ हुई।

यदि शुक्ल प्रतिपदा 34 घटी से अधिक हो तो उस दिन चन्द्रमा नही दिखाई देगा। लेकिन यदि उससे कम हो तो चन्द्रमा उसी दिन दिखाई देगा। ईसवी सन् की जिस तारीख को अमावस्या तिथि पडती है, उसके 1947 की फाल्गुन अमावस्या थी। इसके 19 वर्ष बाद 11 मार्च 1910 को फिर वि. सं 1966 की फाल्गुन की अमावस्या तिथि पडी।

आधी तिथि के समय को जब कि चन्द्र सूर्यसे 6 अश आगे बढता है, करण कहते है। करण कुल 11 है–भव, वालव, कौलव, तेतिल, गरवनिज, विपि, शकुनि, नाग, चतुष्पद किन्तुध्र।

प्रत्येक तिथि मे दो करण बीतते है। शुक्ल प्रतिपदा के उत्तरार्द्ध मे भव नामक करण होता है। कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी के दूसरे आधे भाग को शकुनि कहते है। प्रथम सात करण चर कहलाते हैं और अंत के चार करण स्थिर कहलाते है।

नक्षत्र

तारो के बीच पश्चिम से पूर्व की ओर खिसकता हुआ सूर्य जिस मार्ग से वर्ष भर मे एक चक्कर लगाता हुआ दिखाई पडता है उसको क्रान्तिवृत कहते है। इसी के आसपास चन्द्रमा भी चक्कर लगाता है। चन्द्रमा अपनी मध्यम गति से 27 दिन 18 घटी 18 पल और 16 विपल (27 दिन 7 घन्टा 43 मिनट-11.5 सैकण्ड) मे क्रान्तिवृत का एक चक्कर लगाता है। चन्द्रमा के इस मार्ग के 27 वे भाग को नक्षत्र कहते हैं। चन्द्रमा जिस नक्षत्र मे जितने समय तक रहता है उतने समय तक उस नक्षत्र की गणना होती है। जैसे यदि अश्विनी नक्षत्र 6 बजे प्रात काल से 4 वजे तक रहे तो कहते है कि 6 वजे से 4 बजे तक अश्विनी नक्षत्र है। चन्द्रमा की गति सदैव समान नही होती है। इस कारण नक्षत्र का मान भी सदा समान नही होता है। यो औसतन 1.01191 दिन (1 दिन 18 मिनट) तक एक नक्षत्र रहता है। इसका आरम्भ और अत भी दिन में किसी समय हो सकता है। नक्षत्र 27 है–अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, अश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, और रेवती। वैदिक काल मे तिथियो के स्थान पर नक्षत्रो से गणना की जाती थी। नक्षत्रो के कुछ नाम ऋग्वेद मे मिलते है लेकिन सभी नक्षत्रो के नाम यजुर्वेद मे मिलते है।

दिन व सप्ताह

दिन शब्द के दो अर्थ होते है—1 सूर्योदय से सूर्यास्त तक का समय, 2. सूर्योदय से सूर्योदय तक। दिन के आरम्भ के विषय मे कई मत है। मुसलमान दिन का आरम्भ सायकाल से मानते है। वेबिलोनियो ने दिन का आरम्भ सूर्योदय से माना है। रोम मे दिन का आरम्भ आधी रात से होता था। भारतीय दिन का आरम्भ सूर्योदय से मानते हैं। आधुनिक लोग दिन का आरम्भ अर्धरात्रि से मानते है।

प्राचीन काल मे दिनो के नाम दिये जाते थे। बाद मे बेबिलोनियो ने दिनो को सप्ताहो मे बाट दिया। बेबिलोनिया वाले सात दिनो का, मिश्र वाले दस दिनो का और भारतीय छ. दिनो का मानते थे। अब तो समस्त ससार मे सात वार ही माने जाते है। सप्ताह केवल मानव निर्मित व्यवस्था है। यह ज्योति शास्त्रीय या प्राकृतिक योजनाबद्ध नही है। दिनों के नाम पृथ्वी और सूर्य से अधिक सम्बन्ध रखने वाले सात ग्रहो की कक्षाओ के अनुसार सात वार निश्चित किये गये है—सूर्य (रवि), चन्द्र (सोम), मगल, बुद्ध वृस्पति शुक्र और शनि सृष्टि का आरम्भ रविवार से हुआ अत इसे सप्ताह का प्रथम दिन माना जाता है। सप्ताह के दिनो का क्रम ग्रहो की दूरी, प्रकाश, महत्ता आदि के कारण नही है। सप्ताह का अर्थ ही सात दिन है।

पश्चिमी देशो मे वारो का उल्लेख ई सन् 323 के लगभग रोम के सम्राट कोस्टेन्टाइन ने किया। भारत के वारो का उल्लेख ई सन् 484 से मिलता है।

मानक समय

पृथ्वी 24 घण्टों मे अपनी धुरी पर एक चक्कर पूरा कर लेती है अर्थात् 24 घण्टे मे 360 अश अर्थात् चार मिनट मे एक अंश पार कर लेती है। पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है और इस कारण पूर्व के देशो मे पहले सूर्योदय होता है और पश्चिम के देशों मे बाद मे। यही कारण है कि भिन्न भिन्न स्थानो का समय भी भिन्न भिन्न होता है। यह समय स्थानीय समय कहलाता है। स्थानीय समय भिन्न भिन्न होने के कारण विश्व के विभिन्न देशों में अव्यवस्था फैल सकती है। इस कारण विश्व भर के समय को एक रूप रखने के लिए एक रेखा निश्चित की गई है जो ग्रीनविच रेखा कहलाती है। उसी रेखा को स्थिर मध्याह्न रेखा मान लिया गया है। भारत का समय गीनविच के समय से सदैव 5 घण्टा 30 मिनट आगे रहता है। अब पृथ्वी के किसी स्थान का समय ज्ञात होने पर ग्रीनविच से उसकी दूरी और किसी स्थान का देशान्तर देख कर उस स्थान के सही समय का पता लगा सकते है। जो स्थान ग्रीनविच से पूर्व मे हो तो उस स्थान के समय मे प्रत्येक देशान्तर के अनुसार चार मिनट जोडने से और जो स्थान ग्रीनविच से पश्चिम में हो तो उस स्थान के समय मे प्रत्येक देशान्तर के अनुसार 4 मिनट घटाने से उस स्थान का समय जाना जा सकता है। भारत मे सूर्योदय का मानक समय (स्टेण्डर्ड टाइम) ग्रीनविच से पूर्व 75°46'6 रेखांश एव 23°11' उत्तर अक्षांश पर उज्जैन के स्थानीय समय से माना जाता है। सूर्योदय (जब सूर्य बिम्ब की ऊपरी कोर आकाश मे दिखाई देती है) व सूर्यास्त (जब सूर्य बिम्ब की ऊपरी कोर आकाश मे छीपने लगती है) का समय बराबर बदलता रहता है। यहां कुछ स्थानो का मानक समय दिया जाता है।

मास व	दिल्ली28°39'		बनारस25°29'		मद्रास13°04'		बम्बई18°58'		कलकत्ता22°35'		उज्जैन23°11'	
तारीख	उ	अ.	उ.	अ	उ.	अ.	उ	अ	उ.	अ	उ.	अ.
22 मार्च	6-24	18-33	6-2	18-9	6-13	18-20	6-42	18-50	55-40	17-48	6-03	18-11
1 अप्रेल	6-12	18-39	5-52	18-14	6-6	18-20	6-34	18-52	5-30	17-51	5-53	18-15
1 मई	5-41	18-56	5-24	18-28	5-49	18-24	6-11	19-00	5-05	17-02	5-26	18-27
1 जून	5-24	19-14	5-08	18-44	5-42	18-32	6-11	19-12	4-52	18-17	5-14	18-41
1 जुलाई	5-22	19-23	5-11	18-52	5-47	18-39	6-05	19-20	4-55	18-25	5-18	18-50
1 अगस्त	5-42	19-12	5-24	18-44	5-54	18-36	6-16	19-14	5-08	18-18	5-30	18-42
1 सितम्बर	5-59	18-43	5-39	18-18	5-58	18-20	6-24	18-54	5-19	17-54	5-42	18-18
1 अक्टूबर	6-14	18-58	5-50	17-46	5-59	17-59	7-29	18-27	5-28	17-24	5-53	17-48
1 नवम्बर	6-33	17-36	6-05	17-18	6-03	17-42	6-39	18-05	5-40	17-00	6-05	17-23
1 दिसम्बर	6-56	17-24	6-26	17-07	6-16	17-40	6-55	18-00	5-59	16-51	6-24	17-13
1 जनवरी	7-14	17-35	6-44	17-19	6-31	17-53	7-12	18-12	6-16	17-02	6-41	17-25
1 फरवरी	7-10	18-00	6-42	17-42	6-36	18-10	7-13	18-31	6-16	17-24	6-41	17-47
1 मार्च	6-48	18-20	6-22	17-59	6-26	18-18	6-59	18-44	5-59	17-40	6-23	18-03

पंचांग

समय की सबसे अधिक महत्वपूर्ण इकाई वर्ष है। प्राचीनकाल मे ही सही तिथि जानने के लिये दिनो व महिनो के अलावा वर्षो की भी गणना करनी पड़ती थी। ऐसे वर्षो का क्रम बराबर चलता रहना चाहिए। इससे किसी देश का इतिहास जानने मे बडी सुविधा होती है लेकिन इतिहास की भावना सभी सभ्य देशो मे बहुत बाद मे आई। जब लोगो मे इतिहास की भावना जागृत हुई तब ही सवतो का प्रचलन हुआ। यो हमे बाबुल, मिश्र, भारत आदि मे राजाओ के राजगद्दी पर बैठने के वर्षो का उल्लेख मिलता है लेकिन इससे बराबर क्रम नही मिलता है। जब तक उनका सही वश-वृक्ष ज्ञात न हो उनके समय का सही ज्ञात नही होता है। उनके समय को सही रूप से जानने के लिए अन्य साधन अपनाने पडते है लेकिन तब भी पूर्णतया सही वर्ष नही ज्ञात होते है। यही कारण है कि हम सम्राट अशोक का राजगद्दी पर बैठने का पूर्णतया सही वर्ष नही बतला सकते है। अभी तक इतिहासज्ञ यही अटकल लगाये बैठे है कि वह ई पूर्व 273 व 264 के बीच राजगद्दी पर बैठा। अत. राजगद्दी पर बैठने की तिथि से सवत् का उल्लेख करना ही वर्ष जानने मे ज्यादा सहायक नही होता था।

संवतों का प्रारम्भ

बराबर क्रम से चलने वाले वर्षो की शृंखला के प्रचलन के लिए सबसे महत्वपूर्ण कदम बाबुल के बादशाह नबू नजीर के शासनकाल मे ई पूर्व 747 मे उठाया गया। तब कुछ ग्रहो के असाधारण रूप से इकठ्ठे होने पर 26 जनवरी से एक सवत् यह घोषित कर चलाया गया कि यह देवताओ के आदेश से चलाया जा रहा है लेकिन यह सवत् ज्योतिषियो तक ही सीमित रहा। साधारण जनता मे इसका प्रचार नही हुआ। इस सवत् की देखा-देखी यूनान व रोम मे भी सवत् चलाये गये और वे क्रमश· 776 ई. पूर्व से चालू बतलाये गये, लेकिन ये दोनो सवत् वास्तव मे छठी शताब्दी ईसा पूर्व के लगभग प्रचलित किये गये थे। ईसा पूर्व 312 मे बाबुल जीत कर सिल्युकस ने भी अपने नाम से सवत् चलाया। इसके महीने चन्द्र-गणना के अनुसार थे लेकिन इनका समायोजन सौर वर्ष से किया गया था। इसके लिये 19 वर्षो मे 7 अधिमास होते थे। सिल्युकस के बाद पार्थियानो ने ई. पूर्व 248 मे अपना सवत् चलाया। पार्थियनो का साम्राज्य तक्षशिला तक फैला हुआ था। ई पूर्व 80 के लगभग मध्य ऐशिया के शको ने अफगानिस्तान पर कब्जा कर लिया और इसके बाद वे तक्षशिला, गुजरात, मालवा, व मथुरा आदि पर आक्रमण करने लगे। शको का पार्थियनो से तथा भारतीयो का शको से अब बराबर सम्पर्क होने लगा। इन लोगो के सम्पर्क मे आने से यहा भी क्रमानुसार सवत् का प्रचलन हो गया।

भारत में संवतों का प्रचलन

शको के आने के पहले वेदाग ज्योतिष के अनुसार यहा वर्ष-गणना की जाती थी लेकिन अब सूर्य सिद्धात तथा अन्य सिद्धान्तो के अनुसार वर्ष गणना की जाने लगी। ई. सन् 400 के लगभग तो वेदाग ज्योतिष के अनुसार वर्ष गणना की जानी बिल्कुल बन्द कर दी गई। ई सन्400 व 1200 के बीच सम्पूर्ण भारत मे

'सिद्धान्त ज्योतिष' के अनुसार पंचांग बनने लगे। शक सवत् का प्रचलन सर्वत्र हो गया। यों अलग अलग राजा अपने नाम से भी सवत् चलाने लगे। ये अपनी राजगद्दी पर बैठने के वर्ष से अपना राज्य सवत् चलाते थे। ये सवत् या तो सूर्य सिद्धात, आर्य सिद्धात या ब्रह्म सिद्धान्त पर आधारित थे। धार्मिक गणना के लिये सम्पूर्ण भारत मे तथा हिन्दू राजाओ के राज्यो मे इसी प्रकार वर्ष गणना वर्तमान काल तक चलती रही लेकिन ई सन् 1200 के बाद जहां जहा मुसलमानो का राज्य स्थापित हुआ उन्होंने लौकिक व प्रशासनिक प्रयोजनो के लिए इस्लामी हिजरी सन् का प्रचलन किया। हिजरी सन् मे वर्ष गणना चन्द्र मासो के अनुसार की जाती थी। ई. सन् 1584 मे सम्राट अकबर ने हिजरी वर्ष गणना को बन्द कर तारीख इलाही चलाया जिसमे सौर वर्ष गणना थी। तारीख इलाही का प्रचलन भी ई. सन् 1630 के लगभग बन्द हो गया और पुन: हिजरी सन् का प्रचलन हो गया। ई. सन् 1757 के लगभग अंग्रेजो का भारत मे राज्य-स्थापन होने के समय से यहा ईसवी सन् का तिथिपत्रक, जो ग्रेगरी कलेण्डर नाम से प्रसिद्ध है, लौकिक व प्रशासनिक प्रयोजनो के लिए प्रयोग होने लगा। इसका प्रचार अंग्रेजी शिक्षा के साथ भारत भर मे हो गया और अब हम इससे ऐसे चिपक गये है कि उसे छोड़ने का कतई नही सोचते है, यद्यपि यह बहुत ही असुविधाजनक है। यों भारत सरकार ने सन् 1957 की 22 मार्च से सशोधित पंचाग चालू किया है लेकिन पिछले 22 वर्षो मे इसका प्रयोग कुछ सीमा तक सरकारी विभागो मे ही हुआ है। सरकारी विभागों मे भी अभी ईसवी सन् चलता है और धार्मिक कार्यो मे विभिन्न धर्मावलम्बी अपने-अपने धार्मिक तिथिपत्रको का प्रयोग करते है।

भारतीय इतिहास के अध्ययन के लिये विदेशो के कुछ प्रसिद्ध तिथिपत्रको तथा भारत के तिथिपत्रको का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। सामान्य पाठको के लिये भी यह ज्ञानवर्धक होगा अत: यहा इनका संक्षेप में वर्णन किया जाता है।

कलयुग संवत्

यह संवत् माघ शुक्ला पूर्णिमा, शुक्रवार (17 फरवरी व 18 फरवरी के बीचकी रात, ई पूर्व 3102) से आरम्भ किया बतलाया जाता है। उसी समय मेष सक्रमण भी हुआ था। इस संवत् का सर्व-प्रथम उल्लेख प्रसिद्ध ज्योतिषी आर्य भट ने ई. सन् 499 मे किया था कि अब तक कलयुग के 3600 वर्ष बीत गये है। यो इस संवत् का सबसे पहले प्रयोग चालुक्य वंश के पुलकेशीन द्वितीय के शिलालेख मे ई. सन् 634 मे हुआ। इसका आरम्भ चैत्र शुक्ला प्रथमा और मेष सक्रमण से होता है। इसका वर्ष चान्द्र माहो से गिना जाता है लेकिन प्रत्येक तीसरे वर्ष अधिमास की विधि से सौर वर्ष के बराबर इसकी गणित रखी जाती है। विक्रम-सवत् में 3034 और ई. सन् मे 3101 जोड़ने से यह संवत् निकलता है। ई. सन् 1978 की 15 अप्रेल से कलियुग स वत् 5079 आरम्भ हुआ है।

युधिष्ठिर संवत्

प्रसिद्ध ज्योतिषी वराहमिहिर के अनुसार यह ईसा पूर्व 2449 में आरम्भ हुआ। काश्मीरी पण्डित कल्हण ने इस संवत् का उल्लेख अपनी पुस्तक राजतंरगिणी मे किया है। इस सवत् का कोई शिलालेख अभी तक नही मिला है। यह युधिष्ठिर के राज्याभिषेक के वर्ष से प्रचलित बतलाया जाता है। नये वर्ष का

आरम्भ चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से होता है। ई. सन् मे 2448 जाडने से यह संवत् निकलता है। इसकी गणना चान्द्र वर्ष से होती है। तीसरे वर्ष मलमास की विधि से सौर वर्ष से मिलान किया जाता है।

लौकिक संवत्

इस संवत् का सप्तर्षि तारागण का मघा नक्षत्र मे प्रवेश होने के समय से आरम्भ होने से यह सप्तर्षि सवत् भी कहलाता है। इसका प्रचलन कश्मीर राज्य तथा पजाब के पहाडी भागो मे है। राजतरंगिणी मे काल-गणना इसी सवत् से की गई थी। कलियुग स. 26 की चैत्र शुक्ला 1 (ईसा पूर्व 3076) से यह सवत्सर लगा था। इस सवत् की मास गणना कलियुग सवत् की मास गणना की भांति होती है तथा इसके मास पूर्णिमान्त होते है। कलियुग सवत् मे से 25 घटाने, वि स मे 3019 जोडने, ईसवी सन् मे 3077 जोडने और शक स मे 3154 जोडने से यह सवत् निकल आता है।

बौद्ध संवत्

इस सवत् का प्रयोग भारत मे केवल गया से प्राप्त अशोक चल्लदेव के शिलालेख मे मिला है जिसमे बौद्ध सवत् 1813 (ई. सन् 1270) लिखा है। यह सवत् ई पूर्व 544 से प्रचलित किया गया। इसका आरम्भ बुद्ध की किस महत्वपूर्ण घटना को लेकर किया गया, यह कहा नही जा सकता है। यो बुद्ध का निर्वाण 483 ई पूर्व मे हुआ था। बौद्ध संवत् आदि शकराचार्य के धर्मप्रचार और बौद्ध धर्म के उच्छेद के साथ साथ विलीन हो गया। अब इसका प्रचलन लका के बौद्धो मे है। इस सवत् का वर्ष वैसाख शुक्ला 15 से आरम्भ होता है। ई. सन् 1978 की 22 मई से बौद्ध सवत् 2522 आरम्भ हुआ है।

महावीर निर्वाण संवत्

यह सवत् जैन तीर्थ कर महावीर का निर्वाण होने पर कार्तिक शुक्ला 1, कलियुग सं. 2574 (वि.सं, पूर्व 470 या ईसा पूर्व 527) से आरम्भ हुआ था। जैनो के श्वेताम्वर पथ वाले महावीर का निर्वाण वि स पूर्व 470 मानते है तो दिगम्वर वि. स. पूर्व 605 से मानते है। वास्तव मे सही वि. स पूर्व 470 है। इस सवत् का प्रयोग जैन ग्रन्थो और शिलालेखो मे वरावर होता रहा है। इसके पचाग मे अधिमास (मलमास), क्षयमास, चाद्र तिथि और सौर गणित मानी जाती है। यदि कोई तिथि 5 घटी से कम होती है तो एक दिन पहले ही उस तिथि के पर्व आदि जैन लोग मना लेते है। ई. सन् 1978 की 31 अक्टूबर से वीर स 2505 आरम्भ हुआ है।

विक्रम संवत्

इस सवत् का प्रचलन वंगाल के अतिरिक्त सपूर्ण उत्तरी भारत मे है। यह सवत् कलियुग सवत् 3044 (ई. पूर्व 57) से चालू किया गया जव कि मालव जाति ने मध्य एशिया से आये शको पर विजय प्राप्त कर स्वराज्य स्थापित किया। प्रारम्भ मे यह संवत् 'कृत सवत्' कहलाता था। नन्दसा यूप शिलालेख मे कृत-सवत् 282 लिखा है— "कृतयो द्वयोर्वर्ष शतयोर्द्व्यशीतयोः चैत्रपूर्णमास्याम्।

कृत शब्द के कई अर्थ लगाये जाते है। कृत का अर्थ (1) किया गया (2) चार से विभक्त होने वाला वर्ष (3) स्वर्ण युग, आदि लिया जाता है। डॉ. अल्टेकर ने कृत नाम मालवगण के प्रधान या सेनापति का नाम माना है। डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल कृत का अर्थ स्वर्ण युग मानते है। इसमे कोई सदेह नही कि यह सवत् मालवो द्वारा शकों पर विजय प्राप्त करने तथा अपनी स्थिति पूर्णतया सुदृढ़ करके चलाया गया था और उस काल से भारत मे स्वर्ण युग की स्थापना हुई। अत दोनों इतिहासज्ञों का अर्थ ठीक माना जा सकता है। इस सवत् का प्रचार विशेषकर मालवा मे ही हुआ था क्योकि अब तक जो एक दर्जन शिलालेख मिले है वे वि. स 282 व 481 के बीच के है और वे राजस्थान के नगरी, गंगधार, विजयगढ, वर्नाला, बडवा, नादसा तथा मध्यप्रदेश के मन्सौर स्थान पर मिले है।

मन्दसौर के लेख मे लिखा है—

श्री मालवगणाम्नाते प्रशस्ते कृतसज्ञिते।
एक षष्ठ्यधिके प्राप्ते समाशतचतुष्टये॥

वि स 481 (ई. सन् 424) के बाद शिलालेख वि स 493 व 496 के बीच के है जो राजस्थान के कणस्वा व मध्यप्रदेश के मन्सौर व ग्यारसपुर स्थानो से मिले है। इनमे मालव सवत् का उल्लेख है। मनसौर के वि. सं. 493 के लेख मे बतलाया गया है—

मालवानां गणस्थित्या याते शतचतुष्टये।
त्रिनवत्यधिकेऽब्दाना कृतौ सेव्यघनस्तने॥

इस संवत् की उत्पत्ति के लिए मन्सौर के वि. स. 589 के शिलालेख मे लिखा है—

मालवगणस्थिति वशात्कालज्ञानाय लिखितेषु।

बाद मे यह सवत् विक्रम सवत् के नाम से प्रसिद्ध हुआ, जैसा कि वि स 898 के धौलपुर के शिलालेख मे उल्लेख किया गया है—

वसु नव अष्टौ वर्षगतस्य कालस्य विक्रमाख्यस्य।

यह सवत् विक्रमादित्य के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह विक्रमादित्य गुप्तवंशी सम्राट चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य था जो अपनी विद्वता, दानवीरता व पराक्रम के लिए सर्वत्र प्रसिद्ध है। मालव संवत् उसके राज्यकाल तक मालव प्रदेश, वर्तमान राजस्थान के पूर्वी भाग व मध्यप्रदेश के पश्चिमी भाग मे ही प्रचलित था अतः उसको भारत के अन्य भागो मे भी सर्वमान्य करने के लिए ऐसे प्रतापी सम्राट के नाम से विक्रम सवत् नाम दिया गया। यह नाम भी काफी समय तक लोक-प्रिय नही हुआ। दसवी शताब्दी तक के प्राप्त लगभग 52 शिलालेखों मे केवल 3 मे विक्रम सवत् का नाम मिलता है। इसकी प्रसिद्धी सब से ज्यादा ग्यारहवी शताब्दी मे हुई जब कि गुजरात के चालुक्य वंशी राजा भीमदेव (ई. सन् 1023–64) के लेखो में विक्रम संवत् का प्रयोग किया जाने लगा। भीमदेव के वशजो ने भी विक्रम सवत् का ही उल्लेख अपने लेखो मे किया। कन्नौज के गुर्जर प्रतिहारो ने भी इसी संवत् का प्रयोग किया। धीरे-धीरे सभी प्रान्तो मे विक्रम संवत् का प्रयोग होने लगा और पंचांग इसके अनुसार बनने लगे। इस प्रकार यह संवत् सपूर्ण उत्तरी भारत मे लोकप्रिय हो गया।

इस सवत् के महिनो के नाम इस प्रकार है– चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ और फाल्गुन। इनके नाम इस मास मे पडने वाले सौर महिनो के नाम पर चले है। यो इस सवत् की गणना चान्द्र मास से की जाती है लेकिन सौर गणित से मिलाने के लिये मेषादि सौर पचाग भी रखा जाता है। प्रत्येक तीसरे वर्ष क्षय मास और अधिमास की क्रिया द्वारा ये दोनो सवत् सौर मास से मिला दिये जाते है। उत्तरी भारत मे गुजरात को छोड कर यह वर्ष चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से बदलता है और मास पूर्णिमान्त माना जाता है अर्थात् चैत्र मे केवल शुक्ल पक्ष की 15 तिथिया ही गिनी जाती है और उसके बाद वैशाख का महीना तथा आगे के अन्य महीने कृष्ण पक्ष से आरम्भ होते हैं। फाल्गुन की पूर्णिमा तक की 345 तिथियां व चैत्र के कृष्ण पक्ष की 15 तिथियां इसी वर्ष मे गिनी जाती है। इस प्रकार 360 तिथियो का एक वर्ष होता है। गुजरात व दक्षिण भारत मे वर्ष का आरम्भ कार्तिक से और मास गणना शुक्ल पक्ष के आरम्भ से हो कर अमावस्या को समाप्त होती है। इस प्रकार गुजरात और दक्षिण भारत मे उत्तर भारत की अपेक्षा कृष्ण पक्ष पहले महीने का ही गिना जाता है लेकिन शुक्ल पक्ष दोनो का समान रहता है। इससे विजया दशमी उत्तर व दक्षिण भारत मे आश्विन शुक्ला 10 को मनाई जाती है लेकिन दीपावली उत्तर भारत मे कार्तिक कृष्णा 30 को और दक्षिण भारत मे आश्विन कृष्णा 30 को मनाई जाती है। इसी प्रकार सवत् मे भी अन्तर आता है, जैसा कि निम्न उदाहरण से स्पष्ट होगा—

रामनवमी चैत्र शुक्ला 9 को होती है। यह ई सन् 1978 की 17 अप्रेल को मनाई गई, लेकिन तब उत्तरी भारत में वि. स. 2035 था लेकिन दक्षिण भारत मे तब विक्रम स 2034 ही था। इस प्रकार दीपावली के पश्चात् चैत्र शुक्ला तक उत्तरी व दक्षिणी भारत मे सवत् की समानता रहती है लेकिन कृष्ण-पक्ष मे मास का अन्तर रहता है। वैशाख कृष्णा से आश्विन शुक्ला तक सवत् का और कृष्ण पक्ष मे महीने का भी अन्तर रहता है।

अमान्त और पूर्णिमान्त महीनो का मेल इस प्रकार बैठता है—

अमान्त मास	पक्ष	पूर्णिमान्त मास
फाल्गुन	शुक्ल	
	कृष्ण	चैत्र
चैत्र	शुक्ल	
	कृष्ण	वैशाख
वैशाख	शुक्ल	
	कृष्ण	ज्येष्ठ
ज्येष्ठ	शुक्ल	
	कृष्ण	आषाढ
आषाढ	शुक्ल	
	कृष्ण	श्रावण
श्रावण	शुक्ल	
	कृष्ण	भाद्रपद
भाद्रपद	शुक्ल	
	कृष्ण	आश्विन
आश्विन	शुक्ल	
	कृष्ण	कार्तिक

कार्तिक	शुक्ल कृष्ण	मार्गशीर्ष
मार्गशीर्ष	शुक्ल कृष्ण	पौष
पौष	शुक्ल कृष्ण	माघ
माघ	शुक्ल कृष्ण	फाल्गुन
फाल्गुन	कृष्ण	चैत्र

चान्द्र मासों की गणना मे अधिक और क्षय मासो की गणना करना एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है। चांद्र मासो को सौर मासो से मिलाये रखने के लिये इनकी गणना की जाती है। सौर मासो की गणना संक्रांतियो के अनुसार की जाती है। दो संक्रातियो के बीच का समय सौर मास कहलाता है। सामान्यत: एक चान्द्र मास मे एक सक्राति होती है लेकिन सूर्य पृथ्वी की एक परिक्रमा 365 दिन 5 घन्टा 9 मिनट में कर लेता है। प्रत्येक संक्रांति का समय अलग-अलग है। यह 31 दिन 15 घटा28 मि. 24 सै. से लगा कर 29 दिन 7 घन्टा 37 मिनट 36 सैकण्ड तक का है। चन्द्रमा पृथ्वी की एक परिक्रमा औसतन 27 दिन 7 घन्टे 42 मिनट मे कर लेता है और यही एक चान्द्र मास की अवधि है। अत चान्द्रमासो और सौर मासो की अवधि एक समान नही है। कभी कभी किसी एक अमान्त चान्द्र मास मे संक्राति ही नही होती है और कभी कभी अमान्त चाद्र मास मे दो सक्रातिया पड जाती है। जिस चांद्र मास मे सक्राति नही होती वह मल मास (अधिमास) कहा जाता है। जिस अमात चाद्र मास मे दो सक्रातिया पड़ जाती है वह महीना क्षय-मास कहलाता है। उस चन्द्र मास की गणना नही की जाती है। क्षय मास बहुत कम होते है। जिस वर्ष मे क्षय मास होता है उस वर्ष मे या आगे पीछे दो मलमास हो जाते है। सामान्यत. मार्गशीर्ष, पौष और माघ मासो का क्षय होता है लेकिन मल मास कोई महीना सिवाय पौष के हो सकता है। अभी वि. स. 2035 चल रहा है। यह संवत् अप्रेल 8 ई. सन् 1978 से आरम्भ हुआ है। गुजरात मे जो पचांग कार्तिक पद्धति पर बनते हैं उनका सवत् नवम्बर 1, ई. सन् 1978 से आरम्भ हुआ है।

शक संवत्

यह संवत् चैत्र शुक्ला 1, वि. स. 135 (15 मार्च 78 ई. सन्–वासन्तिक विपुव) से प्रचलित हुआ, लेकिन यह किसने प्रचलित किया यह अभी तक पूर्णतया निश्चित नही है। जहां तक ज्ञात हो सका है यह सवत् उज्जैन के शक क्षत्रप चष्टन ने चालू किया। यो कुछ विद्वानो का मत है कि यह संवत् मध्य ऐशिया के शको द्वारा बैक्ट्रीया पर विजय पाने पर चालू किया गया था और शको ने भारत मे अपने राज्य का विस्तार कर यहां भी इस सवत् को प्रसिद्ध कर दिया। इन विद्वानो के अनुसार यह संवत् ई पूर्व 123 के लगभग आरम्भ हुआ था और युनानी पचाग के अनुसार अमान्त महीनो मे इसकी गणना के जाती थी। तब यह सवत् शक-नेता एजस के नाम से एजस संवत् भी कहलाता था। बाद मे भारत मे जब इस संवत् का प्रचलन हुआ तब इस संवत् का भारतीयकरण हो गया। महीनो के नाम भारतीय हो गये और माह पूर्णिमान्त हो गये। बीत

बीती दो शताब्दियों (200 वर्षो) का लोप तक कर दिया गया। इन 200 वर्षों का लोप कर शकवंशी नरेश कनिष्क के नाम पर कनिष्क सवत् नाम भी दिया गया। अत. पुराने शक सवत् 201 से नया सवत् कनिष्क सवत् 1 कहलाने लगा। अस्तु इस संवत् का भारतीयकरण वि. सं. 135 मे हो गया और पिछले 200 वर्षों मे विदेशो मे चालू हुए सवत् को भुला दिया गया। शक सवत् का सबसे प्रमाणिक शिलालेख चालुक्य बल्लभेश्वर का बादामी शिलालेख शक स. 465 (ई सन् 543) का है—शक वर्षेषु चतुश शतेषु पंच षष्ठि युतेषु। शक जाति के भारत मे बसे निवासियो ने अपने ज्योतिष ग्रन्थो मे इसी सवत् का प्रयोग कर इसको इतना लोकप्रिय बना दिया कि अब भी प्रत्येक भारतीय की जन्मपत्री मे शक सवत का ही प्रयोग होता है। भारत के सुप्रसिद्ध ज्योतिषी आर्य भट्ट तथा वरामिहिर इसी जाति के थे। उत्तरी भारत तथा दक्षिणी भारत- दोनो के शक वर्षो का प्रारम्भ अमावस्या योग के ठीक तुरन्त पश्चात् चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से होता है। यह अवश्य अन्तर है कि उत्तरी भारत मे प्रत्येक मास का कृष्ण पक्ष शुक्ल पक्ष के पूर्व आता है लेकिन दक्षिण भारत मे शुक्ल पक्ष पहले आता है। इस प्रकार उत्तरी भारत का शक सवत विक्रम सवत के साथ प्रारम्भ होता है। दक्षिणी व उत्तरी सवतो के प्रारम्भ के समय यह भी ध्यान देने की बात है कि दक्षिणी सवत का अत फाल्गुन शुक्ल पक्ष के पीछे, फाल्गुन कृष्ण पक्ष की अमावस्या को माना जाता है, चैत्र कृष्ण अमावस्या को नही, यद्यपि विक्रम सवत के हिसाब से उत्तर भारत में उसी फाल्गुन वदि अमावस्या को चैत्र कृष्ण अमावस्या ही कहेगे।

सरकारी शक संवत

काल गणना के लिए भारतीयो और विशेषकर हिन्दुओ मे अब तक लगभग 30प्रणालियां प्रचलित थी। सामान्यत पंचाग धार्मिक कार्यो के लिये काम मे लिया जाता है। उसमे मुख्य विषय है–तिथि और नक्षत्र जिसकी गणना चन्द्र और सूर्य की स्थितियो के अनुसार की जाती है लेकिन देशी पचागो मे तिथि, नक्षत्र आदि का जो समय दिया जाता है वह अत्यन्त भ्रामक होता है। तिथि की समाप्ति के वास्तविक समय के साथ उन पचागो मे दिया गया तिथि समाप्ति काल का अन्तर कभी कभी 6 घण्टो तक का भी देखा जाता है। इसका मुख्य कारण पचांग बनाने वालो का गणित के लिए 'सूर्य सिद्धान्त' पर निर्भर रहना है जब कि अब वेधशालाओ के द्वारा ग्रह गति के सिद्धान्तो मे काफी सुधार हो गया है। सबसे बडी गलती तो वर्षमान की है जो पचागो का मूलाधार होता है। भारतीय पचाग वर्षमान 365 दिन 6 घण्टा 12 6 मिनट लेते है जब कि शुद्धमान 365 दिन 5 घण्टा 48 8 मिनट है अर्थात 23.8 मिनट का अन्तर है जो पिछले 1400 वर्षो मे 23 दिन का अन्तर ले आया है। इससे वर्ष जो महाविपुत (वसन्त ऋतु मे जिस दिन और रात्रि का मान समान रहता है) सक्राति से आरम्भ हुआ था अब 23 दिन बाद आरम्भ होने लगा है अत पचागो मे एकरूपता लाने तथा पचाग मे सुधार करने के लिये ई० सन् 1952 मे भारत सरकार ने एक आयोग डॉ० मेघनाथ शाह की अध्यक्षता मे नियुक्त किया था। इस आयोग ने भी शक सवत् को राष्ट्रीय मान्यता दी है। वि० स० 2014 की चैत्र कृष्णा 7, शुक्रवार (ई0 सन् 1957 की 22 मार्च) से शक सवत् का राज्य कार्यो मे उल्लेख होने लगा है। 1957 की 22 मार्च से शक सवत् 1879 की चैत्र कृष्णा 7 को चैत्र 1 माना गया। अब यह सवत् 365 दिनों का होता है और प्रत्येक चौथे प्लुत (Leap year) वर्ष मे एक दिन बढा दिया जाता

है । इस प्रकार अब वर्तमान 365 दिन 5 घण्टा 48 मिनट 46 सैकण्ड माना गया है जो प्रत्यक्ष वेघ के अनुसार है । इसके पंचांग मे चैत्र, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ तथा फाल्गुन 30 दिनो के और वैसाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण व भाद्रपद 31 दिनो के होते हैं । प्रत्येक चौथे वर्ष मे चैत्र माह 31 दिनो का होता है । प्रत्येक 22 मार्च को चैत्र 1 पडा करेगा लेकिन चौथे वर्ष (लीप ईयर) मे 21 मार्च को चैत्र 1 हुआ करेगा । यथा ई0 सन् 1960, 1968 आदि मे यह वर्ष 21 मार्च से आरम्भ हुआ करेगा । इस प्रकार शक संवत् व ईसवी के महीनो का एक प्रकार से स्थाई सम्बन्ध स्थापित हो गया है ।

नये शक सवत् के पंचाग का प्रभाव सौर और चान्द्र गणनाओं पर भी पडा है । अब सौर पंचांग वैसाख की प्रतिपदा के स्थान पर 23 दिन पहले चैत्र प्रतिपदा से प्रारम्भ होता है । समय की गणना भी घटी, पल, विपल मे न हो कर घण्टा, मिनट और सैकण्ड मे होने लगी है और दिन का मान सूर्योदय से न होकर ग्रिगोरियन कैलेण्डर की भाति अर्धरात्री से होने लगा है । अब जो भी गणना की जावेगी वह 82·5 अंश पूर्वी रेशांख व 23 11 उत्तरी अक्षाश (उज्जैन का अक्षांश) से की जावेगी ।

इस प्रकार शक सवत् को राष्ट्रीय मान्यता प्रदान की गई है । हिन्दुओ मे अब तक जो काल गणना की लगभग 30 प्रणालिया प्रचलित थी उनमे एक समता लाई गई है । इस काल गणना से अमावस्या, पूर्णिमा आदि की गणना मे कोई अन्तर नही आयेगा लेकिन चान्द्र गणना तथा प्रत्यक्ष वेघ मे अब तक जो त्रुटि रहती थी वह भारत सरकार द्वारा प्रकाशित होने वाले पंचांगो में ग्रहो की स्थिति के साथ शुद्ध रूप से ज्ञात होती रहेगी । इस कारण अब भविष्य मे कोई अन्तर रहने की सम्भावना नही रहेगी ।

अब भारतीय ऋतुएं संशोधित पंचांग के अनुसार स्थायी रूप से निश्चित हो गई है– ग्रीष्म- वैशाख और ज्येष्ठ; (21 अप्रेल से 21 जून) वर्षा- आषाढ और श्रावण, (22 जून से 22 अगस्त) शरद-भाद्र और आश्विन; (23 अगस्त से 22 अक्तूबर) हेमन्त-कार्तिक और अग्रहायण, (23 अक्तूबर से 21 दिसम्बर) शिशिर–पौष और माघ (22 दिसम्बर से 19 फरवरी) तथा वसंत्– फाल्गुन और चैत्र (20 फरवरी से 20 अप्रेल)। इस पचाग के दिनांक भी स्थायी रूप से ग्रिगोरियन पंचाग से मिलते रहेंगे । ई. सन 1979 की मार्च 22 से शक संवत् 1901 आरम्भ हुआ है ।

मौर्य संवत

मौर्य संवत का उल्लेख केवल उत्कल देश के राजा खारवेल के एक शिलालेख मे मिला है । इसका आरम्भ चन्द्र गुप्त मौर्य के राज्यारोहण से होने का अनुमान किया जाता है । हेमचन्द्र सूरि ने महावीर निर्वाण के १५५ वर्ष पश्चात तथा विक्रम संवत मे ३१५ वर्ष पूर्व माना है । इस संवत की कार्तिक शुक्ला और चैत्र शुक्ला, दोनो प्रकार से आरम्भ का गणना की जाती थी । चैत्र शुक्ला से पूर्वोत्तर भारत मे और दक्षिण व पश्चिम भारत मे कार्तिक शुक्ला से इसकी गणना की जाती थी । शेष पचाग विक्रम संवत की ही भाति था ।

सप्तऋषि संवत

आकाश मण्डल के उत्तरी भाग मे ध्रुव तारे के समीप स्थान में जो शकटाकार सात तारे दिखाई देते हैं वे सप्तऋषि कहलाते हैं । उन्ही के नाम पर यह संवत काश्मिर तथा उवर के पहाडी क्षेत्रों मे ७६ ई. पूर्व से प्रचलित है । इसके मास पूर्णिमान्त व चैत्रादि होते है। इसकी गणना १०० वर्ष के चक्र से होती है । यथा ई. सन् १६७८ मे यह वर्ष ५४ सप्तऋषि कहलाता है ।

गुप्त संवत्

गुप्त सवत् का प्रारम्भ किसने किया, यह अभी तक अनिश्चित है । ऐसा अनुमान है कि यह सवत एक लिच्छवि सवत था जो सम्भवत. उनके गणतन्त्र के समाप्त हो कर राजतन्त्र स्थापित हो जाने पर आरम्भ किया गया था । इस संवत् का प्रारम्भ वि. स 377 की चैत्र शुक्ला प्रतिपदा, रविवार (ई. सन् 320 की 26 फरवरी) से हुआ माना जाता है । इसका प्रचलन ई. सन् 550 तक सम्पूर्ण उत्तरी भारत मे रहा । गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद भी इसका प्रयोग गुजरात व राजस्थान मे तेरहवीं शताब्दी तक होता रहा। इस सवत् का ज्यादातर प्रयोग चन्द्रगुप्त व बुद्धगुप्त के सिक्कों मे तथा गुप्त तथा वल्लभि वंशी राजाओ के शिलालेखो मे मिलता है। इस सवत् की मास गणना चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से तथा मास पूर्णिमान्त होते थे । गुप्त सवत् की तिथियो के लिए हमे ई. सन् 310 व 320 के सवत् काल का प्रयोग करना होता है ।

वल्लभी संवत्

इसका प्रचलन गुप्त सवत् के साथ ही साथ ई. सन् 320 मे हुआ था तथा इसकी गणना मे भी गुप्त सवत् के नियम ही लागू होते थे । इस सवत् की स्थापना किसी वल्लभी नरेश ने नही की थी। मासगणना गुजरात के पंचांगके अनुसार होती थी । इस संवत् का उल्लेख गुजरात राज्य के सौराष्ट्र व काठियावाड क्षेत्र मे मिले ताम्रपत्रो व शिलालेखो मे मिलता हैं । वल्लभी सवत 1 प्रचलित ई. स. 320-321 अथवा 26 फरवरी 320 से 15 मार्च 321 के समान था ।

चेदी या कलचुरी संवत्

यह संवत् कलचुरी वंश के चेदी राजा सर्वनाथ ने वि स. 306 की श्रावण शुक्ला प्रतिपदा (ई सन् 249 की 27 अगस्त) रविवार से प्रारम्भ किया था । इसका प्रयोग दक्षिण पश्चिम भारत के शिलालेखो में होता था । ऐसे शिलालेख ज्यादातर वि. स 792 व 934 के बीच के हैं । इसकी मास गणना विक्रम सवत् की भाति ही होती थी । महिने पूर्णिमान्त होते थे ।

गंगेय या गंग कदंब

इस संवत् का उल्लेख गग व कदब वशी राजाओ के शिलालेखो मे मिलता है । यह सवत् कब व किसने आरम्भ किया, अभी तक निश्चित नही हुआ है। प्रो आर. सुब्बाराव इसका आरम्भ ई सन् 494-495 से तो प्रो. घोष ई. सन् 495- 96 से, तो कृष्णराव ई सन् 497 की श्रावण या भाद्रपद से होना बतलाते हैं

श्री हर्ष संवत्

इस संवत् का प्रारम्भ वि. सं. 664 की चैत्र शुक्ला प्रतिपदा (ई. सन् 607 की 3 मार्च) से हुआ था जब कि सम्राट श्री हर्षवर्धन राज्यासीन हुआ था। इस संवत् का उल्लेख तत्कालीन दानपत्रों व शिलालेखों में मिलता है। इस संवत् का प्रचार मथुरा व कन्नौज प्रदेश मे ही रहा। इसके मास आदि की गणना सामान्य चैत्रादि (चान्द्र) और मेषादि (सौर) थी। इसका प्रचलन ई. सन् 844 तक रहा जब कि प्रतिहार नागभट्ट ने इसके बदले विक्रम संवत का प्रचलन कर दिया।

भट्टिक संवत्

जैसलमेर (राजस्थान) नगर से प्राप्त कुछ शिलालेखो मे भट्टिक सवत का उल्लेख मिलता है। इसमे सबसे पुराना शिलालेख भट्टिक संवत 534 का है। सम्भवतः यहा के नरेश भट्टिक ने इस संवत को वि. सं. 681 (ई. सन् 624) के मार्गशीर्ष माह से आरम्भ किया था। भट्टिक संवत 534 का अर्थ वि. सं. 1214 (ई. सन् 1157) है। इस संवत का प्रचलन तत्कालीन जैसलमेर रियासत मे विक्रम संवत की पन्द्रहवी शताब्दी तक ही रहा।

कौल्लम संवत्

यह संवत् केरल राज्य में वि. सं. 881 (25 अगस्त ई. सन् 925) से प्रचलित है। इस सवत् को परशुराम संवत् भी कहते है। इसका वर्ष दक्षिण मलाबार मे सिंह सक्रांति से और उत्तर मलाबार मे कन्या संक्रांति से आरम्भ होता है और गणना सौर संवत् के अनुसार होती है। ई. सन् 1978 मे कौल्लम सवत् 1154 चल रहा है जो 16 अगस्त 1978 से आरम्भ हुआ है।

नेपाली या नेवारी संवत्

नेवार (नेपाल का क्षेत्रिय अपभ्रंश रूप) संवत् का प्रारम्भ वि. सं. 936 की कार्तिक शुक्ला 1 (ई. सन् 879 की 20 अक्टूबर) से नेपाल के राजा जगमल्लदेव ने किया था। इसके पहले वहा गुप्त संवत् व हर्ष सवत् प्रचलित थे। वि. सं. 1823 तक नेपाल मे यही संवत् चलता रहा। वि. सं. 1824 (ई. सन् 1768) मे महाराज पृथ्वीनारायण शाह ने नेपाली सवत् के स्थान पर शक संवत् को प्रचलित किया। इसके मास अमान्त होते है।

चालुक्य विक्रम संवत्

चालुक्य महाराज विक्रमादित्य त्रिभुवन मल्ल ने यह संवत् चालुक्य विक्रम वर्ष के नाम से वि. सं. 1032 की फाल्गुन शुक्ला 5 (ई. सन् 1076 की 14 फरवरी) से प्रचलित किया। इसका प्रयोग इस वंश के शिलालेखो में दक्षिणी भारत के पश्चिमी भाग में मिलता है। इसकी मास गणना पंचांगादि शक सवत् के अनुसार चैत्रादि चान्द्र मास से होते थे तथा वर्ष सौर होते थे। इस संवत् का प्रयोग ई. सन् 1079 से सन् 1162 तक ही रहा।

सिंह संवत्

गुजरात के सिद्धराज जयसिंह ने यह संवत् वि. स 1170 (ई. सन् 1113) से चलाया था। इसका पंचाग चान्द्र- सौर था तथा वर्ष आषाढ़ प्रतिपदा से आरम्भ होता था। इसका प्रचलन केवल गुजरात में था।

लक्ष्मण सेन संवत्

यह संवत् बगाल के राजा लक्ष्मण सेन के शासन की समाप्ति से वि. सं. 1176 की कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा (ई. सन् 1119 की 7 अक्टूबर) से आरम्भ हुआ था। इसका प्रचलन बंगाल और बिहार के कुछ भागों मे है। इसका पचाग चान्द्र सौर है तथा कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा से वर्ष आरम्भ होता है।

पुदुवैप्पु संवत्

कोचीन (केरल) के उत्तरी भाग मे ई. सन् 1341 मे समुद्री तूफान आने से काफी भू भाग को नुकशान हुआ। बाद मे नई बस्तियां बसाई गई। इस घटना की याद में यह सवत् चालू किया गया। इसका एक ताम्रपत्र पुदुवैप्पु संवत् 322 मीनम 14 (ई. सन् 1663 मार्च 22) का मिला है। अब इस सवत् का प्रचलन नही है।

बंगाली संवत्

बंगाल मे पहले शक संवत् का प्रचार था लेकिन मुसलमानो द्वारा शासित होने पर वहा राजकार्यो मे हिजरी सन् चलने लगा। विद्वानो मे तब भी शक सवत् का ही प्रचार रहा। हिजरी सन् चान्द्र वर्ष था लेकिन वि. स. 1613 (ई. सन् 1556-हिजरी सन् 963) मे यह सौर वर्ष हो गया और मेष सक्राति से इसका वर्ष आरम्भ होने लगा। तब से यह बगला सवत् कहलाने लगा। ई. सन् 1978 मे बंगला संवत् 1385 चल रहा है। यह 15 अप्रेल 1978 से आरम्भ हुआ है।

इलाही सन्

यह सन् बादशाद अकबर ने अपने शासन काल के उन्नीसवे वर्ष (हिजरी सन् 992- ई सन् 1584) के प्रारम्भ में आदेश देकर जारी किया था। यह सन् बादशाह के राजगद्दी पर बैठने (शुक्रवार 14 फरवरी 1556- वि स 1612 की फाल्गुन शुक्ला 4) के तत्काल बाद की मेष संक्राति (28 रबी आखर 963- बुधवार 11 मार्च 1556- वि. स. 1612 की चैत्र कृष्णा 30) से प्रारम्भ होना माना गया। अबुलफजल के अकबरनामा मे इसी सन् का प्रयोग हुआ है। अकबर व जहागीर के शासनकाल मे इस सन् का प्रचलन रहा। बाद मे इसका प्रचलन बन्द हो गया।

यह सन् मूलत. सौर वर्ष था जो मेष संक्राति से अगली मेष सक्राति तक चलता था। वर्ष 12 महिनो मे विभक्त था। एक माह मे 29 से 32 दिन होते थे। बारह महिनो के नाम ईरानी नाम रखे गये थे- फरवरदीन, उर्दिबहिश्त, खुरदाद, तीर, अमरदाद, शहरेवर, मिहर, आबान, आजाद, दै, बहमन और हस्फदारमज तारीखो की गणना हिजरी तारीखो की भाति एक सूर्यास्त से दूसरे सूर्यास्त तक की जाती थी। महिने की पहली तारीख का निर्धारण सम्बन्धित सूर्य संक्राति से होता था यदि सूर्य सक्राति मध्याह्न से पहले पड़ती

थी तो नव वर्ष की गणना उसी दिन की संध्या से की जाती थी। यदि सूर्य सक्रांति उस दिन के मध्यान्ह के बाद तथा सूर्यास्त के पहले पड़ती थी तो नववर्ष का प्रारम्भ सूर्य संक्रांति के तत्काल बाद होने वाले दिन की संध्या से गिना जाता था।

फसली सन्

यह सन् बादशाह अकबर के राज्यकाल में भूमिकर वसूली के लिए 14 फरवरी 1556 (हिजरी सन् 963 के रबी आखर की 2 तारीख) से चलाया गया था लेकिन अपने राज्यासीन होने के वर्ष से इसको फसली 963 गिना। इसका प्रचलन बंगाल व उत्तर प्रदेश मे है तथा गणना चन्द्र- सौर वर्ष के अनुसार की जाती है। बंगाल मे यह वर्ष पूर्णतया सौर है तथा वहा वैशाख प्रतिपदा से आरम्भ होता है। उत्तर प्रदेश मे यह चन्द्र- सौर है और वहा आश्विन की प्रतिपदा से आरम्भ होता है। शाहजहाँ ने ई. सन् 1636 (हिजरी सन् 1046) में दक्षिण मे फसल सन् आरम्भ किया। अब इस सन् की गणना पहली जुलाई से पूर्णतया सौर वर्ष के अनुसार की जाती है। ई. सन 1979 में इसका सन 1389 चल रहा है।

जुलूसी सन्

प्राचीन काल में राजा लोग अपने राज्याभिषेक की तिथि से अपना राज्य वर्ष चलाते थे जैसा कि अशोक के रामपुरवा शिलालेख से ज्ञात होता है—

सडुवीसति (व) समिसितेन (पर्डविशति वर्षाभिषिक्तेन)

(राज्याभिषेक के 26 वर्ष बीतने के पश्चात्)

मुगल बादशाह अकबर ने भी अपने राज्याभिषेक के समय में ऐसा संवत् जारी किया था। उसके राजकीय दस्तावेजों व सिक्को में इसी सवत् का प्रयोग किया जाता था। नये बादशाह के राजगद्दी पर बैठने से वह सवत् समाप्त हो जाता था और नया आरम्भ होता था। इनका सन् हिजरी सन् के अनुसार होता था। यह संवत् शासन का एक वर्ष समाप्त कर के मनाया जाता था। यह आवश्यक नही था कि राजगद्दी पर बैठने की तिथि से ही जुलूसी सन् चालू कर दिया गया हो।

बादशाह अकबर से बहादुरशाह द्वितीय तक के जुलूसी सन् इस प्रकार हैं :—

अकबर— ई सन् 1556 की मार्च 11 से (हिजरी सन् 963 रवि उल आखिर 28)

जहांगीर— ई. सन् 1606 की मार्च 11 से (हिजरी सन् 1014 जिल्काद 11)

शाहजहां—ई. सन् 1628 जनवरी 28 (ई सन् 1037 जमादी उल आख़िर 8)

औरंगजेब- ई. सन् ई. सन् 1660 मई 1 (हिजरी सन् 1070 रमजान 1)

बहादुरशाह— ई. सन् 1707 फरवरी 23 (हिजरी सन् 1118 जिल्हिज 1)

जहांदरशाह— ई. सन् 1712 अप्रेल 10 (हिंजरी सन् 1125 रबी उल अव्वल 1)

रफीउदरजात— ई. सन् 1719 फरवरी 17 (हि. सन् 1131 रबीउस्सानी 9)

रफीउद्दौला— ई. सन् 1719 मई 29 (हिजरी सन् 1131 रज्जब 20)

मुहम्मदशाह— ई सन् 1719 फरवरी 18 (हिजरी सन् 1131 रवीउस्सानी 9)

मुहम्मदशाह ने अपने पहले के दो बादशाहो को बादशाह नही माना और अपने जुलूस का दिन वही रखा जिस दिन रफिउद्दरजातगद्दी पर बैठाया गया था।

अहमदशाह— ई. सन 1748 अप्रेल 19 (हि. सन 1161 जमादिअव्वल 1)

आलमगीर द्वितीय— ई. सन् 1754 जून 2 (हिजरी सन् 1167 शाबान 101)

शाहजहा द्वितीय— 29 नवम्बर 1759 (हि. सन् 1173 रबीउरसानी 8)

शाह आलम द्वितीय— 25 दिसम्बर 1759 (हि. सन् 1173 जमादि अव्वल 4)

अकबर द्वितीय— 19 नवम्बर 1806 (हि. सन् 1221 रमजान 7)

बहादुरशाह द्वितीय— 29 सितम्बर 1837 (हि. सन् 1253 जमादि उस्सानी 28)

ई सन् 1857 (हि. सन् 1274) के विप्लव मे बहादुरशाह द्वितीय अग्रेजो द्वारा गिरफ्तार कर रगून भेज दिया गया और इस प्रकार मुगल बादशाहत का अ त हो गया।

जुलूस का उत्सव राज्याशीन होने के दूसरे वर्ष से ही मनाया जाता था लेकिन इतिहास ग्र थो मे सन् 1 जुलूस भी लिखा जाता था। यहा जुलूस के प्रारम्भ की तारीख वही दी गई है जिस तारीख से दूसरा जुलूस मनाया गया। गद्दीनशीनी की तारीख नही दी गई है।

बादशाह अकबर ने अपने राज्य शासन के 29वे वर्ष अर्थात ई सन् 1584 (हिजरी सन् 992) से हिजरी सन् के स्थान पर इलाही सन् प्रारम्भ किया और उस समय के पूर्व के शासन वर्षो का हिसाब लगाकर उसका अपनी गद्दीनशीनी के वर्ष से माना और उसी गणना के अनुसार जुलूसी सन् के (राज्य वर्ष) लिखने लगे। इलाही सन् के महिने ईरानी थे और इस कारण अकबर का जुलूसी सन् उसकी गद्दीनशीनी के दिन से नही बल्कि ईरानियो के नए वर्ष के दिन अर्थात फरवरदीन मास के प्रारम्भ से मान लिया गया और उसी दिन सन् जुलूस का उत्सव होता रहा। बादशाह जहागीर भी अपना सन् जूलूस उसी दिन मनाता था लेकिन शाहजहा के समय से हिजरी सन् के हिसाब से मनाया जाने लगा। शाहजहा की गद्दीन-शीनी 8 जमादिउस्सानी को हुई थी लेकिन पीछे से जुलूस 1 जमादिउस्सानी से मनाया जाने लगा।

राज शक या श्री शिव संवत्

इस संवत का प्रयोग महाराष्ट्र के सरकारी कागजपत्रो मे मिलता है। इस सवत को शिवाजी ने अपने राज्याभिषेक वि. स. 1731 की ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशी (जून 6 ई. सन् 1674) से आरम्भ किया था। इसकी अमान्त चान्द्र मास से गणना आरम्भ कर इसे सौर वर्ष से मिलाया जाता है। ई. सन् मे 1674 तथा वि स. मे 1731 घटाने से इसको सवत की गणना की जा सकती है। इस सवत का प्रचलन सन् 1818 तक मराठा राज्य के अत तक रहा।

मव्लूदी सन्

टिप्पू सुलतान ने यह सन् अपने राज्याभिषेक से हिजरी सन् 1197 जमादिउल आखिर 1 (ई. सन्

1783 की 4 मई) से आरम्भ किया। इसके संवत्सर चक्र व महिने हिन्दू पद्धति पर थे लेकिन नाम बदल दिये थे। इस सन् के लिए पैगम्बर मुहम्मद के जन्म वर्ष (ई. सन् 572) कल्पना की गई। यह सन् टिप्पू की मृत्यु तक (ई. सन् 1799 की 4 मई) चला। टिप्पू के राज्य काल के कई शासकीय दस्तावेजो मे इसका उल्लेख मिलता है।

महृयानन्दाब्द संवत्

महर्षि दयानन्द एक युग- पुरुष थे। वेदो के वे प्रकाण्ड पडित थे तथा भारतीय समाज के आचार विचारो मे उन्होने एक महान् युगान्तर ला दिया था। इनकी जन्म तिथि वि. सं. 1881 फाल्गुन कृष्णा 14 (ई. 1825 की 16 फरवरी) से यह संवत गिने जाने की व्यवस्था की गई है। वि स. 1981 के पहले यह सवत उनकी मृत्यु तिथि वि. सं. 1940 कार्तिक कृष्णा 30 (ई. सन् 1883 की 30 अक्टूबर) से गिना जाता था। वि. सं. 1981 की शिवरात्रि से पहले दयानन्दाब्द 42 था लेकिन उसके बाद से 59 (आयु) क्षेपक मिला कर सवत् 101 बनाया गया। अब ई. सन् 1979 में दयानन्दाब्द 156 है। इस सवत् का प्रचलन आर्यसमाजियो तक ही सीमित है।

विलायती सन्

इसका प्रचार बंगाल व उडीसा राज्यो मे है। इसका पचांग सौर है तथा वर्ष कन्या संक्रांति से आरम्भ होता है। प्रत्येक माह सक्रांति से आरम्भ होता है। ई. सन् 1979 मे विलायती सवत् 1387 चल रहा है।

अमली सन्

इसका प्रचार उड़ीसा राज्य मे है। यह कटकी सवत भी कहलाता है। इसका पंचांग सौर तथा वर्ष भाद्रपद शुक्ला 12 से आरम्भ होता है। सन् 1979 मे अमली सवत 1387 चल रहा है।

पारसी संवत्

पारसी संवत् यों ईरानी संवत् है लेकिन जब पारसी लोग भारत मे आये तब उन्होने इस संवत् का प्रचलन यहां कर दिया। यह संवत् ईरान के प्रसिद्ध बादशाह खुसरो परवेज के पौत्र और शहरयार के पुत्र यज्द जुर्द तीसरे ने ई सन् 632 की 16 जून से यज्दीजर्द संवत के नाम से चलाया था। इसका वर्ष 12 महिनो का तथा प्रत्येक माह 30 दिन का होता है। वर्ष के अन्त में 5 दिन गिन कर वर्ष मे 365 दिन गिनते है। प्रत्येक 120 वें वर्ष मे 13 महिने गिने जाते हैं जिससे प्रति वर्ष जो लगभग चौथाई दिन की सौर वर्ष मे कमी रह जाती है वह एक महीना अतिरिक्त हो जाने से पूरी हो जाती है। इस प्रकार पारसी पंचांग 120 वर्ष का युग मान कर सौर गणना के निकट बना रहता है। वि. सं. की चैत्र शुक्ला 11 (ई सन् 1079 की 16 मार्च) से इस पंचांग मे प्रति चौथे वर्ष मे एक दिन बढाया जाने लगा। अत. अब यह पंचाग भी सौर पंचांग हो गया है। वि. सं. 1136 से यह पचांग खुरासान बादशाह सुल्तान जलालुद्दीन के नाम से जलाली

सन् भी कहलाने लगा। यह पंचांग मेषादि है लेकिन भारतीय पारसी कन्या संक्रान्ति से भी इसे गिनते है। ई सन् 1979 मे यज्दीजर्द सवत 1347 और जलाल सवत 900 चल रहा है।

पारसी महीनो के नाम इस प्रकार हैं— फर्वरदिन, उर्दी वहिश्त, खुरदाद, तीर, अमरदाद, शहरयार, मिहर, आवान, आदरजर, देय, वहमन और स्फन्दयार।

विदेशी संवत्

यहा हम कुछ अन्य देशों के सवतो का वर्णन करते है जो सवतो का इतिहास तथा कुछ के भारत मे प्रचलित होने के कारण भारतीय इतिहास जानने के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

चीनी संवत्

चीनी सवत का प्रयोग भारत मे नही होता है लेकिन प्राचीन काल से भारत और चीन मे बहुत ही महत्वपूर्ण सम्बन्ध रहे है। चीन के कई यात्री भारत मे आये और उनके यात्रा वर्णनो से हमारे इतिहास पर बहुत महत्वपूर्ण प्रकाश पडा है। इन वर्णनो मे चीनी संवत का उल्लेख मिलता है। ऐसी दशा मे इसका ज्ञान रखना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

चीनी संवत बहुत पुराना वतलाया जाता है। चीनियो की गणना से ई. सन् 1979 मे उनका सवत 9,60,02,478 चल रहा है। उनके मत से उनके प्रथम शासक आदि मनु ने यह संवत चलाया था। उनका वर्ष चान्द्र और सौर दोनो ही प्रकार का है। राज कार्यो मे सौर वर्ष और धार्मिक कार्यो मे चान्द्र वर्ष चलता है। इसका वर्षमान $365\frac{1}{4}$ दिन का है लेकिन वार पाच ही माने जाते है। दिन रात 100 'के' का गिना जाता है। एक 'के' 36 पल का होता है।

चीन में विभिन्न कालो मे विभिन्न सवत प्रचलित किए गए। प्राचीन काल मे वहा भी जुलूसी सवतों के (राज्याभिषेक के वर्ष) गिनने की प्रथा थी। चीनी भाषा मे जुलूसी सवत् को 'निन्हो' कहते है। अभी वहां ईसाई कलेण्डर का ज्यादा प्रचार है।

मगी संवत्

यह सवत बर्मा मे चलता है और एक प्रकार से बौद्ध सवत है। इस सवत की गणना ई. सन् 638 की 21 मार्च शनिवार से आरम्भ की गई थी। इसका प्रचलन पाम्पा चान राहन ने किया था। इसका पंचांग बंगाली सवत की तरह सौर है। यहा के बौद्ध साहित्य मे एक और सवत का उल्लेख मिलता है जो वि. सं. से 486 वर्ष पहले आरम्भ किया वताया जाता है।

यहूदी संवत्

यह संवत् 3761 ईसा पूर्व मे 7 अक्टूवर की रात के 11 वज कर $11\frac{1}{3}$ मिनट पर आरम्भ हुआ माना जाता है, जव कि यहूदियो के अनुसार ससार की उत्पत्ति हुई। इसका पंचाग चान्द्र होता है तथा

महीना चान्द दिखाई देने से आरम्भ होता है। अतः इसकी तिथि शाम से आरम्भ होती है। चौथी शताब्दी के लगभग इसका पंचाग सौर वर्ष से समायोजित किया गया और 19 वर्षीय चक्र मे तीसरे, छटे, नवे, ग्यारहवे, सतरहवे, उन्नीसवे वर्ष मे अधिमास गिनने लगे।

रोमन संवत्

रोम नगर की स्थापना की तिथि से रोमन सवत् का प्रारम्भ हुआ। वर्ष की आरम्भिक तिथि 21 अप्रैल है लेकिन वर्ष का कोई निश्चय नही है। विभिन्न विद्वान विक्रम संवत् पूर्व 690, 693 694 व 695 स्थापना का वर्ष वतलाते है। कई विद्वान इस संवत् को 1 मार्च से 25 मार्च के वीच किसी समय से आरम्भ हुआ मानते है। प्रारम्भ मे यह वर्ष 304 दिन का होता था व इसमे 10 महीने होते थे लेकिन रोम के बादशाह नुमा पोम्पोलियम ने ई. पूर्व 673 मे इस वर्ष को 355 दिनों का माना और इसमे 2 महीने जोड़ दिये। नये महीनो के नाम जनवरी व फरवरी रखे। इन महीनों मे दिन क्रमानुसार इस प्रकार होते थे—29, 28, 31, 29, 31, 29, 31, 29, 31, 29 व 29। वास्तव मे रोमनो को वर्ष की वास्तविक लम्बाई का ज्ञान नही था। उनका पंचांग चान्द्र गणना के अनुसार था। मास के दो भाग होते थे। पूर्णिमा, जिसे वे ईद कहते थे, उनके मास का विभाजन दिन था। इसमे अलावा पल का भी विभाजन करते थे जिसे वे नोनी कहते थे। महीने के पहले दिन, जिसे वे लोग केलेण्डस कहते थे, नगर-निवासी एक स्थान पर इकट्ठे होकर उस नए मास का पचाग चन्द्र-दर्शन व पूर्णिमा की तिथि का विचार कर बनाते थे। यदि कभी चन्द्र दर्शन या पूर्णिमा निर्धारित दिन को नही होती थी तो वे अगले विभाजक दिन से पीछे को गिन कर दिन का हिसाब लगाते थे। जूलियस सीजर ने वाद में ई. पूर्व 46 मे चान्द्र वर्ष को सौर मे बदल दिया। उस वर्ष उसने 90 दिन और जोड दिए, जिससे वर्ष 445 दिन का हो गया लेकिन इस गड़वड़ को तत्काल दूर कर दिया गया। उसने मिश्र के ज्योतिषी सोसीजेनस की राय के अनुसार वर्ष 365.25 दिन का माना और प्रत्येक वर्ष को 365 दिन का मान कर .25 दिन को गणना मे लाने के लिए प्रत्यक चौथा वर्ष 366 दिन का गिना। वास्तव मे एक सौर वर्ष 365 दिन 5 घण्टा 48 मिनट 46 सैकिण्ड का होता है। इससे प्रत्येक चौथे वर्ष 44 मिनट 56 सैकिण्ड अधिक गिना जाने लगा। यह अन्तर वि. सं. 1639 (ई सन् 1582) मे लगभग 11 दिन का हो गया। अतः इसके लिए नई व्यवस्था की गई, जो ईसवी सन् के विवरण मे वतलाई गई है। इसी रोमन संवत् को वाद मे ईसाइयो ने अपना लिया जो अब ईसवी सन् के नाम से सर्वत्र प्रचलित है।

यूनानी संवत्

प्राचीन काल मे यूनान छोटे-छोटे प्रजातन्त्र राज्यो का समूह था। प्रत्येक प्रजातन्त्र राज्य के प्रधान के नाम से संवत् चला करता था। जब कोई नया प्रधान चुना जाता था, उसके नाम से नया सवत् प्रारम्भ हो जाता था। ये संवत् एक प्रकार के जुलूसी सवत् होते थे। विक्रम संवत् पूर्व 720 (ई. पूर्व 776) मे इनके स्थान पर ओलम्पिया सवत् का का प्रारम्भ हुआ। एक वर्ष मे 12 महीने 354 दिनो के होते थे। प्रत्येक महीना 10, 10 दिन के 2 पक्षो मे बाटा गया था और रोमन महीनो की भांति ही गिना जाता था।

सल्यकेतु संवत्

उत्तर-पश्चिम भारत मे मिले कुछ सिक्कों पर सल्यकेतु सवत् लिखा मिला है। यह संवत् सिकन्दर के सेनापति सल्यकेतु ने सिकन्दर के मरने के 12 वर्ष बाद ई. पूर्व 312 मे बाबुल विजय कर तीसरी अक्टुबर 312 ई. पूर्व चलाया था। इसका पचाग चान्द्र सौर था। इसका वर्ष पहली अक्टुबर से आरम्भ होता था। महीने अमांत होते थे। इसे सवत् को सौर पचांग से मिलाए रखने के लिए 19 वर्षो मे 7 अधिमास रखे जाते थे।

तुर्की संवत्

कई इतिहास लेखको ने अपने इतिहासो मे तुर्की संवत् का भी उल्लेख किया है। यह सवत् गाजलय बादशाह के समय से गिना जाता है। इसका वर्ष चान्द्र है तथा प्रत्येक तीसरे वर्ष एक अधिक मास गिना जाता है। अत. यह चान्द्र सौर वर्ष है। यह वर्ष कुम्भ सक्राति मास की अमावस्या से आरम्भ होता है जो लगभग 11 मार्च को पड़ती है। तुर्की भाषा मे चद्रमा को 'आई' कहते हैं अंतः इसके महीनोके अंत मे 'आई' शब्द लिखा जाता है। वर्ष को 'यील' कहते हैं। अंग्रेजी शब्द 'ईयर' इसी शब्द से बना है।

ईसवी सन्

अंग्रेजी शासन के कारण भारत मे यह सन् अत्याधिक प्रचलित हुआ। ज्यादातर आधुनिक शिक्षा प्राप्त भारतीयो को अपनी तिथियो का ज्ञान नही होगा लेकिन इस सन् की तारीखो को वे तत्काल बता देंगे। सरकारी कार्यालयो मे भी नया शक सवत् का प्रचलन कर दिए जाने पर भी इसी का अबाध प्रयोग होता है।

ईसवी सन् सामान्य रूप से ईसाइयो का सन् है जो उनके 'ईश्वर पुत्र' ईसा के जन्म से प्रारम्भ किया माना जाता है। वास्तव मे उनके जन्म से 3 वर्ष पीछे से वि. स 58 की चैत्र शुक्ला से इसकी गणना आरम्भ की गई है। इसका प्रचलन डायेनिसियस एक्सीजस द्वारा ई. सन् 532 के लगभग गणना कर के किया गया था। सबसे पहले जर्मनी के चार्ल्स तृतीय के अपने राज्य शासन (879 ई.) के साथ 'हमारे प्रभु के वर्ष' लगाना आरम्भ किया। इस वर्ष का चैत्रादि विक्रम सवत व ईस्वी सन् मे लगभग 56 वर्ष 9 महीने का अंतर रहता है। वि. स. का प्रारम्भ मार्च या अप्रेल से तथा ईस्वी सन् का प्रारम्भ पोष या माघ माह से होता है। इस सन् का प्रचार छठी शताब्दी से पूर्व नही था। छठी शताब्दी से ईसाइयो का धार्मिक सवत् मान लिये जाने पर की इसका प्रचार पहले यूरोप मे और फिर विश्व भर मे हो गया।

ईसा मसीह के लिए कहा जाता है कि वह ईस्टर के दिन अपनी मृत्यु शय्या से उठ कर स्वर्ग गए थे अतः ईसाई इस दिन को बहुत ही पवित्र दिन मानते है तथा उनका धार्मिक पंचांग भी इसी दिन से आरम्भ होता है। इस पर्व को नियत करने के लिए ईसाई तत्कालीन यूरोप में प्रचलित रोमन पंचाग की सहायता लेते थे। रोमन सवत्, रोम नगर की स्थापना तिथि 21 अप्रेल सन 753 ई पूर्व तथा

694 विक्रम संवत पूर्व मेष के 7 अंश मे होने के समय से चलना आरम्भ हुआ था। तब रोमन वर्ष 304 दिन का माना जाता था जिससे मार्च से दिसम्बर तक 10 मास होते थे। बाद मे जनवरी और फरवरी दो मास और बढाकर 12 महिने का वर्ष आरम्भ किया गया। रोमन पंचांग पहले चान्द्र गणना के अनुसार 355 दिन के बनते थे लेकिन जूलियस सीजर ने 46 ई. पूर्व से 29 दिन 12 घण्टा 44 मिनट 2.87 सैकण्ड (29.53-06 दिन) के चान्द्र मास को औसतन 30 दिन 10 घण्टे 29 मिनट 4.1 सैकण्ड के सौर मास मे बदल दिया। सौर वर्ष वास्तव मे 365.2422 दिन का होता है लेकिन जूलियस सीजर ने उसे 365.25 दिन का तथा वर्ष का आरम्भ 25 मार्च से माना। प्रत्येक वर्ष मे 365 दिन गिने जाकर लगे। ई. सन् 1582 (वि. सं. 1639) मे यह अन्तर लगभग 11 दिन का हो गया। इससे ऋतुओं मे अन्तर आने लगा। अत: पोपग्रिगोरी 13वें ने ई. सन् 1582 की 5 अक्टूबर, शुक्रवार को 15 अक्टूबर, शुक्रवार घोषित कर ईसवी सन् के बढ़े हुए दिनो को घटा कर पचांग में संशोधन कर दिया। आगे ऐसी गलती न हो इसके लिए यह नियम बना दिया कि ऐसी पूर्ण शताब्दी के फरवरी मास में ही 29 दिन गिने जावें जो 400 से पूर्णतया विभाजित हो सके। पूर्ण शताब्दियो मे नही गिना जावे। इस नियम से भी 22.8 सैकण्ड का अन्तर रहेगा लेकिन यह बहुत कम है। इससे 4000 वर्षो मे केवल एक दिन का अन्तर आयेगा। इस संशोधन को डेनमार्क तथा हालैण्ड ने तत्काल स्वीकार कर लिया लेकिन कई देशो ने इसका विरोध किया। वर्षो तक बहुत से लोग पोप ग्रेगरी को कोसते रहे और उसका सशोधन नही माना लेकिन बाद मे उनको अपनी भूल मालूम हुई। अत: जर्मनी और स्वीजरलैण्ड ने वि. सं. 1757 (ई. सन् 1700) इंग्लैण्ड ने वि. स. 1809 (ई. सन् 1752), आयरलैण्ड ने वि. स. 1839 (ई .सं. 1782), जापान ने वि स. 1930 (ई. सं. 1873), चीन व अलबानिया ने वि. स. 1969 (ई. सन् 1912), बलगेरिया ने वि. सं. 1973 (ई. सन् 1916), रूस ने वि. स. 1975 (ई. सन् 1918), ग्रीस व रूमानिया ने वि. सं. 1981 (ई. सन् 1924), और टर्की ने वि. स. 1984 (ई. स. 1927) मे इस सशोधन को माना। इंगलैण्ड ने ई. सन् 1752 में जब संशोधन किया तब 3 सितम्बर का 14 सितम्बर मान कर 11 दिन घटा दिए क्योंकि तब तक 11 दिन कर अन्तर आ गया था। भारत अग्रेजो की अधीनता मे रहने के कारण यहां के इतिहासो मे विभिन्न तिथियो मे अन्तर इसी कारण मिलता है। कई इतिहास लेखक तिथियो का उल्लेख पुराने तिथि-पत्रक के अनुसार देते हैं तथा कई सशोधित तिथि-पत्रक के अनुसार। वास्तव मे 5 अक्टूबर 15 से लेकर 2 सितम्बर 1752 तक की ईसवी तारीखों को नई पद्धति की तारीखो मे ही दिया जाना चाहिये।

ईसवी सन् के तिथि–पत्रक में पोप ग्रेगरी के द्वारा महत्वपूर्ण संशोधन किए जाने के कारण यह ग्रेगोरियन कलेण्डर भी कहलाता है। यो यह तिथि-पत्रक संसार के ज्यादातर देशों मे प्रचलित है, लेकिन इस तिथि-पत्रक मे भी अभी तक बहुत कुछ संशोधन की आवश्यकता है। इस तिथि-पत्रक के महीने 28 से 31 दिन के मनमाने ढंग से निश्चित कर दिए गए हैं। ये इस प्रकार हैं– जनवरी 31 दिन, फरवरी 28 दिन (लीप वर्ष में 29 दिन), मार्च 31 दिन, अप्रैल 30 दिन, मई 31 दिन, जून 30 दिन, जुलाई 31 दिन, अगस्त 31 दिन, सितम्बर 30 दिन, अक्टूबर 31 दिन, नवम्बर 30 दिन और दिसतम्बर 31 दिन। इन

महीनो के दिनो का ज्योतिष से कोई सम्बन्ध नही है। प्रत्येक महीने मे कितने दिन होते हैं यह याद रखना असुविधाजनक होता है। प्रत्येक वर्ष व महीने के प्रारम्भ होने के वार बराबर बदलते रहते हैं। आर्थिक दृष्टि से महीनो के कम-ज्यादा दिनो के होने से किसी महीने मे 24 दिन तो किसी महीने मे 28 दिन काम करना पडता है। अत हिसाब व आकडे रखने मे असुविधा होती है। इस कारण से इसके सशोधन की बराबर माग की जाती रही है। इसमे सबसे महत्वपूर्ण सशोधन इटली के ज्योतिषी आँमली ने ई0 सन् 1887 मे प्रस्तावित किया और जिनका अन्तिम स्वरूप विश्व कलैण्डर मे मिलता है।

हिजरी सन्

हिन्दुओ मे वर्ष गणना के लिए जहां लगभग 30 पचाग प्रचलित हैं वहां मुसलमानो की समय गणना केवल एक ही तिथि-पत्रक-हिजरी सन्-से की जाती है। यह ससार के सभी इस्लामी देशो मे प्रचलित है। इसका प्रारम्भ ई स न् 638 के लगभग खलीफा ऊमर ने किया। यह सन् इस्लाम धर्म के प्रवर्तक हजरत मुहम्मद के मक्का से हिजरत (पलायन) के वर्ष से वि० स० 679 की श्रावण शुक्ला 1 (ई० सन् 622 की 15 जुलाई) गुरुवार की शाम से आरम्भ किया गया जबकि मुहर्रम माह का प्रथम चन्द्र दर्शन हुआ है। इसी वर्ष की 20 सितम्बर 622 को हजरत मुहम्मद मक्का से मदीना को गए। ऐसा कहा जाता है कि पहले यह सन् चान्द्र सौर था और आवश्यकतानुसार उसमे अधिमास जोडे जाते थे लेकिन हिजरी सन् 10 (ई. सन् 632) से यह सन् पूर्णतया चान्द्र वर्ष कर दिया गया। अत. ऐसी दशा मे यह सन् ई० सन् 622 की मार्च 19 शुक्रवार की शाम से आरम्भ हुआ।

चाद का महिना 29 दिन 12 घण्टे 44 मिनट 2-86 सेकण्ड का होता है। हिजरी माह 29 या 30 दिन का होता है। हिजरी सन् के वर्ष मे 354 या 355 दिन होते हैं। यह सौर वर्ष से 10 दिन, 53 घडी 30 पल और 6 विपल (10 दिन, 21 घण्टे, 1 मिनट और 12 सेकण्ड) के लगभग कम होता है। तारीख चान्द की पहली, चाद की दूसरी आदि कहलाती है। इसकी तारीख सूर्यास्त के साथ बदलती है। प्रत्येक तारीख सायकाल से प्रारम्भ होकर दूसरे दिन सांयकाल तक मानी जाती है। गणित के अनुसार चन्द्रोदय को पहले से जान लेना मुस्लिम धर्म की दृष्टि से वर्जित है। पचाग पहले से बनाने की निषेधाज्ञा भारत मे औरगजेब ने भी निकाल दी थी। चांद को देखते ही उनका नया माह आरम्भ हो जाता है। यदि चन्द्र दर्शन प्रतिपदा को हो जाता है तो उस महीने मे 30 दिन गिनते है और यदि चन्द्र दर्शन द्वितीय को हो जाता है तो उस महीने मे 29 दिन हो जाते है। चन्द्र दर्शन सभी स्थानो पर एक ही दिन नही हो सकता है। देश भेद से और क्षितिज पर आकाश के साफ न होने से चन्द्र दर्शन मे एक दिन का अन्तर कभी कभी हो जाता है। हिजरी सन् के महीनो के नाम और दिनो की संख्या इस प्रकार निर्धारित है—

क्रम सं०	महीने का नाम	दिन	क्रम स०	महीने का नाम	दिन
1	मुहर्रम	30	7	रज्जब	30
2	सफर	29	8	शाबान	29
3	रबीउल अव्वल	30	9	रमजान	30
4	रबीउस्सानी (रबीउल आखिर)	29	10	शव्वाल	29
5	जमादीउल अव्वल	30	11	जिल्काद	30
6	जमादउस्सानी (जमादीउल-आखिर)	29	12	जिल्हिज	29

रबीउस्सानी को रबीउल आखिर और जमादीउल आखिर को जमादी उस्सानी भी कहते है।

हिजरी सन् का वर्ष 354 दिन 8घण्टे व 48 मिनट का होता है और इसमे सौर वर्ष से 11 दिन की बढ़ोतरी प्रति वर्ष होती रहती है। इस हिसाब से 32.25 महीनो मे 1 महीना और 32.25 वर्षों मे एक वर्ष आगे बढ़ जाता है। इसके महीने भी ईसवी सन् या विक्रम संवत् के किसी महीने मे पड़ सकते हैं। हिजरी माह चन्द्रोदय से होता है और उसी समय (सायकाल) से पहली तारीख शुरू हो जाती है। प्रत्येक तारीख सायकाल से आरम्भ होकर दूसरे दिन सायकाल तक मानी जाती है। चन्द्रोदय कब होगा, यह निश्चित नही है। विभिन्न भारतीय (हिन्दू) पंचागो मे प्रत्येक तिथि का समाप्ति समय दिया होता है। उस समय के अनुसार चन्द्रोदय होने की सम्भावना रहती है। यदि शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा सूर्योदय के 15 घण्टा 36 मिनट (39 घटी) में समाप्त हो जाती है तो बहुत सम्भव हैं कि चन्द्रोदय उसी साय को हो जाय। लेकिन यदि उसके बाद समाप्त हो तो चन्द्रोदय द्वितीय को ही होगा। सूर्योदय का समय भी बदलता रहता है। अतः जून के द्वितीय पक्ष में अधिकतम दिनमान 13 घण्टा 35 मिनट (33.5 घटी) रहता है तो दिसम्बर के द्वितीय पक्ष मे दिनमान केवल 10 घण्टे 41 मिनट (27घटी) ही रहजाता है। अतः चन्द्रोदय का समय भी बदल जाता है। इस घटा-बढी के कारण यदि तिथि की समाप्ति सूर्यास्त से 2 घण्टे (5 घटी) पूर्व या उसके लगभग होती है तो चन्द्रोदय उसी दिन हो जायेगा अन्यथा अगले दिन होगा। इस प्रकार मार्च के विपुव दिन ने सितम्बर माह के विपुव दिन तक यदि प्रतिपदा 10 घण्टे से 15.50 घण्टे (25 घटी से 39 घटी) के बीच समाप्त होती है और सितम्बर के विपुव दिन से लेकर मार्च के विपुव दिन तक के काल मे यदि प्रतिपदा 8 घण्टा 50 मिनट से 14 घण्टा (22 घटी से 35 घटी) के बीच समाप्त होती है तो चन्द्रोदय उसी दिन होगा और यदि उनके बाद तिथि समाप्त होती है तो चन्द्रोदय द्वितीया को होगा। चन्द्रोदय होते ही उसी शाम से हिजरी माह की पहली तारीख चालू हो जाती है लेकिन हिन्दू या अंग्रेजी पंचांग मे पहली तारीख दूसरे दिन दर्ज की जाती है तथा 30 दिसम्बर 1978 को विक्रम संवत 2035 की पौष शुक्ला प्रतिपदा थी जो 44 घटी पर समाप्त हो गई और इस कारण चन्द्रोदय 31 दिसम्बर (शुक्ला पक्ष की द्वितीया) की शाम को हुआ और हिजरी तारीख 1 उसी सांय को-आरम्भ हो गई लेकिन पचागो मे जनवरी 1, 1979 (पौष शुक्ला तृतीया) के दिन हिजरी सन के माह

सफर की 1 तारीख दर्ज की गई ।

डा. रघुवीरसिंह व मनोहरसिंह राणावत द्वारा सम्पादित (देवीप्रसाद द्वारा अनुवादित) 'शाहजहां-नामा' के पृष्ठ 25 से 27 तक नवचन्द्र दर्शन के विषय मे जो विवरण दिया है वह हिजरी सन की तारीख जानने के लिए अत्यन्त उपयोगी और शोध पूर्ण रीति है । उन्होने लिखा है—

"समूचे वर्ष मे जब भी शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा सूर्योदय से 37 (अर्थात 22 घटी और 12 पल अथवा 8 घण्टे और 53 मिनट) के लगभग बाद या उससे कभी भी पहले ही समाप्त हो जाती है तो उस दिन सध्या को अवश्य ही नवचन्द्र दर्शन हो जावेगा और उसी सध्या को नया हिजरी महिना प्रारम्भ होगा ।

समूचे वर्ष मे प्रतिपदा सूर्योदय से ·65 (अर्थात 39 घडी अथवा 15 घण्टे और 36 मिनट) के लगभग या उससे कभी भी बाद समाप्त होती है तो नव चन्द्र दर्शन उस दिन संध्या को कदापि नही हो सकेगा और उसके अगले दिन शुक्ला द्वितीया की संध्या को वह अवश्य ही हो सकेगा ।

मार्च से सितम्बर—जब भी शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा सूर्योदय से 42 (25 घडी 12 पल या घण्टे 10 4 मिनट) के लगभग या उससे कभी भी पहले ही समाप्त हो जाती है तो उस दिन संध्या की अवश्य ही नवचन्द्र दर्शन हो जायगा और उसी दिन सध्या से नया हिजरी महिना प्रारम्भ होगा ।

सितम्बर से मार्च—जब भी शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा सूर्योदय से 53 (31 घडी 48 पल या 12 घण्टे 44 मिनट) के लगभग या उससे कभी भी बाद समाप्त हो जाती है तब नवचन्द्र दर्शन उस दिन कदापि नही हो सकेगा और अगले दिन शुक्ला द्वितीया की संध्या को वह अवश्य होगा ।"

विश्व कैलेण्डर

विश्व मे अभी सब से ज्यादा प्रचलित कैलेण्डर ग्रेगोरियन कैलेण्डर है । इस कैलेण्डर का प्रयोग लगभग सभी देशो मे प्रशासनिक कार्यों लिए किया जाता है, लेकिन धार्मिक कार्यों के लिए प्रत्येक धर्म का अलग अलग कैलेण्डर होता है । ग्रेगोरियन कैलेण्डर इतना ज्यादा प्रचलित होते हुए भी दो कारणो से बहुत अधिक असुविधाजक है—

(1) इसके वप व महीने विभिन्न वारो से प्रारम्भ होते है, और

(2) इसके महीने विभिन्न सख्या के दिनो के होते है ।

इससे प्रति वर्ष कैलेण्डर पलटना पडता है तथा प्रत्येक महीने मे काम करने के दिनो की सख्या अलग-अलग होती है । अत हिसाब व आंकडे रखने मे असुविधा होती है । यह देख कर राष्ट्र सघ मे न्यूयार्क वर्ल्ड केलेण्डर एशोसियन ने ई. सन 1923 मे नए विश्व केलेण्डर की योजना रखी । इसके अनुसार एक वर्ष 4 भागो मे बाटा जावेगा । जिससे पहला महीना 31 दिनो का व शेप दो महिने 30, 30 दिन के होगे । पहला महीना रविवार से, दूसरा महीना बुधवार से तथा तीसरा महीना शुक्रवार से आरम्भ होगा । इससे प्रत्येक महीने मे 26 काम के दिन होगे । प्रत्येक वर्ष

का 365 वां दिन, 31 दिसम्बर व 1 जनवरी के बीच का दिन विश्व अवकाश के रूप में मनाया जावेगा तथा प्रत्येक चौथे वर्ष का अतिरिक्त दिन, जून व जुलाई 1 के बीच का दिन, अंतर्राष्ट्रीय अवकाश दिवस के रूप मे मनाया जाएगा। ये दिन वारो मे नही गिने जावेगे अतः जनवरी व जुलाई सदा रविवार से ही आरम्भ होगे। प्रत्येक तिमाही में 13 सप्ताह कुल 91 दिनो के होंगे। इससे एक ही कैलेण्डर से प्रतिवर्ष काम चलता रहेगा। प्रत्येक पर्व एक ही वार को पडा करेगा। व्यवसायिक लोगो को इससे अपन हिसा-किताव रखने व वजट बनाने मे बड़ी सुविधा हो जावेगी। सरकारी योजनाऐ बनाने मे इससे काफी सुविधा हो जावेगी तथा सरकारी रिकार्ड को ठीक रखने मे सहुलियत मिलेगी। न्यायालयो, शिक्षण संस्थाओ आदि को अपने सत्र ठीक समक पर प्रत्येक वर्ष चालू करने मे आसानी रहेगी तथा गृहणियों को अपने घर का बजट बनाने में भी सुविधा रहेगी। अब तक विश्व वेलेण्डर से अधिक सरल, सुविधा जनक व श्रेष्ठ केलेण्डर और कोई नही वन पाया है।

इस कैलेण्डर पर विचार करने, रूपरेखा निश्चित करने व प्रचार करने मे कुमारी एलिजा वेथ एचलिस का बहुत बड़ा हाथ है। कुछ लोगो का मत है कि यह कैलेण्डर उसके नाम से 'एचलिस कैलेण्डर' कहलाना चाहिए। इस कैलेण्डर को प्रचलित करने के लिए यूनेस्को मे भी कई वार विचार हुआ है। भारत ने ई. सन् 1953 में इस केलेण्डर के विषय में सयुक्त राष्ट्र साघ मे प्रस्ताव रखा लेकिन ब्रिटेन और अमेरिका के विरोध के कारण अभी तक अन्तिम निर्णय नहीं लिया जा सका है।

विभिन्न राज्यों के पंचाग

भारत के विभिन्न राज्यो मे पंचाग अलग अलग है। उनके सवत का प्रारम्भ निम्न तिथियों को 1978 मे हुआ—

बंगाल व आसाम (सौर)	15 अप्रेल
पंजाव व हरियाणा ,,	13 अप्रेल
उडीसा ,,	13 अप्रेल
तमिलनाडू ,,	14 अप्रेल
केरल ,,	17 अगस्त
महाराष्ट्र, आन्ध्र (चान्द्र), मैसूर, उत्तरप्रदेश, विहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान व उत्तर पश्चमी भारत	8 अप्रेल
गुजरात व (राजस्थान के कुछ भागो मे) (चान्द्र)	1 नवम्बर

अधिक मास और क्षय मास

अधिक मास की गणना ऋग्वेद के समय से की जाती रही है ताकि मासो और ऋतुओ का सम्बन्ध बराबर बना रहे। ऋग्वेद मे उल्लेख है—

"जो व्रतावलम्बन करके अपने अपने फलोत्पादक बारह महीनो को जानते है और उत्पन्न होने वाले तेरहवें मास को भी जानते है....।"

यदि किसी सौर वर्ष मे नवचन्द्र दर्शन 1.40469 दिन (30.93528 व 29. 53059 दिनों का अन्तर) पूर्व होता है तो दूसरा नवचन्द्र दर्शन प्रथम सौर मास की समाप्ति के पूर्व ही हो जावेगा। इसी प्रकार यदि किसी सौर वर्ष मे नवचन्द्र दर्शन 1 40469 दिन पश्चात होता है लेकिन सौर वर्ष के 3 29438 दिन पूर्व हो जाता है तो नवचन्द्र दर्शन प्रथम व द्वितीय सौर माह के आरम्भ के पूर्व हो जायेगा अर्थात एक अधिक व एक निज ज्येष्ठ माह हो जावेगा। इसी प्रकार अन्य अधिक तथा क्षय मासो की गणना सलग्न सारिणी (पृष्ठ 44) के प्रथम चन्द्र माह के चौथे कालम मे दिये दिनो के पूर्व या बीच के दिनो मे प्रथम चन्द्रोदय को देखकर की जा सकती है।

यह निश्चित है कि जब भी क्षय मास होता है तो उसके 12 माह मे दो अधिक मास अवश्य होगे, एक पहले व एक बाद मे लेकिन यह आवश्यक नही है कि तत्काल पहले या बाद ही हो।

चन्द्र माह पचाग के दरवाजे होते है लेकिन सौर माह दरवाजे की चूल होते है जिस पर दरवाजे घूमते रहते है। प्रत्येक चान्द्र माह का नाम वही होता है जो उस बंगला सौर माह का होता है जिसमे वह पड़ता है लेकिन तामिल नाड मे पिछला सौर महिना होता है। मेष संक्राति का आरम्भ होने पर बगाल का सौर माह वैशाख, तामिल नाड का सौर माह चितराई और केरल का सौर माह मैटम से आरम्भ होता है। प्रत्येक सौर माह सक्राति से आरम्भ व समाप्त होता है।

यहा वि स. 58 (ई. सन् 1) से वि. स. 2202 (ई. सन् 2145) के अधिक मास और क्षय मास दिये जाते है।। विभिन्न अधिक व क्षय मास इस प्रकार है—

चैत्र :— 58 123 142 161 180 199 264 283 302 321 340 405 481 546 687 752 771 790 809 828 893 912 931 950 979 988 1034 1053 1072 1091 1110 1129 1175 1194 1213 1232 1251 1270 1316 1354 1392 1457 1541 1579 1498 1663 1682 1701 1720 1722 1739 1804 1823 1842 1861 1880 1945 1964 1983 2002 2021 2086

वैशाख .— 66 85 104 150 169 188 207 226 245 291 310 329 348 367 386 432 451 470 489 508 527 573 592 611 630 638 649 657 668 676 695 714 733 779 798 817 836 855 874 920 939 958 996 1015 1061 1080 1099 1118 1137 1156 1202 1221 1240 1259 1278 1297 1362 1381 1400 1408 1419 1427 1438 1465 1484 1503 1522 1549 1560 1568 1579 1587 1606 1625 1644 1690 1709 1728 1747 1766 1785 1831

1850 1869 1888 1907 1926 1972 1991 2010 2029 2048 2067 2113 2132 2151 2170 2178 2189

ज्येष्ठ :— 74 93 112 131 139 158 177 196 204 215 223 234 242 253 261 272 280 299 318 337 345 356 364 375 383 394 402 413 421 440 459 478 486 497 505 516 524 535 543 554 562 581 600 619 646 665 684 703 722 741 760 787 806 825 844 863 882 901 928 947 966 985 993 1004 1012 1023 1042 1050 1069 1088 1107 1126 1134 1145 1153 1164 1172 1183 1191 1210 1229 1248 1267 1275 1286 1294 1305 1313 1324 1332 1351 1370 1389 1416 1435 1446 1454 1473 1492 1511 1530 1557 1576 1595 1614 1633 1652 1671 1698 1717 1736 1755 1763 1774 1793 1812 1839 1858 1877 1896 1904 1915 1923 1934 1942 1953 1961 1980 1999 2018 2037 2045 2056 2064 2075 2083 2094 2102 2121 2140 2155 2186 2197

आषाढ़ :— 63 71 82 90 101 109 120 128 147 166 179 185 212 231 250 269 288 307 326 353 372 391 410 418 429 438 448 456 467 475 494 513 532 551 559 570 578 589 597 608 616 627 635 650 673 692 700 711 719 730 738 749 757 768 776 795 814 833 841 852 860 871 879 890 898 909 917 936 955 974 982 1001 1020 1031 1039 1058 1077 1096 1115 1123 1142 1161 1180 1188 1199 1207 1218 1237 1256 1264 1283 1302 1321 1329 1340 1348 1359 1367 1378 1386 1397 1405 1424 1443 1462 1470 1481 1489 1500 1508 1519 1527 1538 1545 1565 1584 1603 1611 1622 1630 1641 1649 1660 1668 1679 1687 1706 1725 1744 1752 1771 1782 1790 1801 1809 1820 1828 1847 1866 1885 1892 1893 1931 1950 1969 1988 2007 2026 2034 2053 2072 2091 2110 2119 2129 2137 2148 2156 2167 2175 2194.

श्रावण :— 60 79 98 117 125 136 144 155 163 174 182 193 201 220 239 258 266 277 285 296 304 315 323 334 342 361 380 399 426 445 464 483 502 521 540 567 586 605 624 643 662 681 689 708 727 746 765 773 784 792 803 811 822 849 868 887 906 914 925 933 952 963 971 990 1009 1028 1036 1047 1055 1066 1074 1085 1093 1104 1112 1131 1150 1169 1196 1215 1226 1234 1245 1272 1291 1310 1337 1356 1375 1394 1413 1432 1451 1478 1497 1516 1535 1543 1554 1562 1573 1593 1600

1619 1638 1657 1676 1684 1695 1703 1714 1722 1733 1741 1760 1779 1798 1817 1825 1836 1844 1855 1863 1874 1882 1901 1912 1920 1939 1958 1966 1977 1985 1996 2004 2015 2023 2042 2061 2080 2099 2107 2126 2145 2164 2183 2202.

भाद्रपद:— 68 87 106 152 171 190 209 228 247 239 312 331 350 369 388 407 434 453 472 491 499 510 518 529 548 575 594 613 632 640 651 659 670 678 689 697 716 735 754 781 800 819 838 857 876 895 229 941 960 979 998 1017 1063 1082 1101 1120 1139 1158 1177 1204 1223 1242 1261 1280 1299 1345 1364 1383 1402 1410 1421 1429 1440 1448 1459 1467 1486 1505 1524 1551 1570 1581 1589 1608 1627 1646 1665 1692 1711 1730 1749 1768 1787 1794 1806 1833 1852 1871 1890 1909 1928 1947 1974 1993 2012 2031 2050 2069 2088 2115 2134 2137 2153 2172 2180 2191 2199.

आश्विन:— 57 76 95 114 133 198 210 236 255 270 339 358 377 396 415 480 537 556 621 686 762 827 846 865 884 903 968 987 1006 1025 1044 1109 1128 1147 1166 1185 1250 1269 1288 1307 1326 1391 1532 1597 1616 1635 1654 1673 1738 1757 1776 1795 1814 1879 1898 1917 1936 1955 2020 2039 2058 2077 2096 2161.

कार्तिक :— 320 462 545 564 583 602 663 705 724 743 808 949 1193 1315 1334 1353 1372 1437 1456 1475 1494 1513 1578 1626 1635 1654 1719 1860 2085 2142

मार्गशीर्ष ·— 1253 1353 1481 2104

फाल्गुन .— 423 442 462 546 564 583 602 621 1212 1269 1334 1353 1372 1391 1410 1475 1513 1532 1616 2039 2104 2123 2142 2161 2180.

क्षय मास

मार्गशीर्ष :— 75 94 179 198 320 339 461 667 808 949 1372 1437 1578 2142

पौष — 57 113 480 545 583 602 621 686 827 968 1109 1250 1315 1334 1353 1391 1456 1597 1738 1879 2020 2085 2104 2161

माघ :— 564 1532 2039 2180.

सूर्य सिद्धान्त के अनुसार अधिक या क्षय मास, एक सौर वर्ष मे नये चान्द्र दर्शन की तिथि निम्न सारिणी के अनुसार होने पर जानना आसान होगा—

सारिणी

चन्द्र माह	सौर माह के अत के दिन	चन्द्र माह की अवधि	अधिक व क्षय माहो की सीमा (सम्बन्धित कालम 2 के दिनो को कालम 3 से घटाने पर शेष)
1	2	3	4
			प्रथम कालम मे लिखा चान्द्र माह अधिक माह होगा यदि सौर माह मे प्रथम चन्द्र दर्शन निम्न दिये दिनो से पूर्व होता है :–
वैशाख	30 93528 दिन	29 53059 दिन	1 40469 दिन
ज्येष्ठ	62.35555 „	59.06117 „	3 29438 „
आषाढ	94.00028 „	88 59176 „	5 40852 „
श्रावण	125 47555 „	118.12235 „	7.35320 „
भाद्रपद	156.49417 „	147 65293 „	8 84122 „
आश्विन	186 93555 „	177 18353 „	9.75202 „
कार्तिक	216.62888 „	206 71411 „	10.11475 „
			प्रथम कालम मे दिया चान्द्र माह क्षय होगा यदि किसी सौर वर्ष में चान्द्र दर्शन निम्न दिये दिनो के पहले या पश्चात होता है :–
मार्गशीर्ष	246.31916 „	236.24470 „	10.07446 के पश्चात तथ 10.11475 दिन पूर्व
पौष	275 63694 „	265.77529 „	9.86164 दिन पश्चात तथा 10 07447 दिन पूर्व
माघ	305 08499 „	295 30588 „	9.77910 दिन पश्चात तथा 9.86166 दिन पूर्व
			प्रथम कालम मे लिखा चान्द्र माह अधिक होगा यदि सौर माह मे प्रथम चन्द्र दर्शन निम्न दिये दिनो से पूर्व या पश्चात होता है–
फाल्गुन	334 90527 „	327.83647 „	9.77912 दिन पश्चात तथा 10.06880 दिन पूर्व
चैत्र	365 25875 „	354.36705 „	10 06880 दिन पश्चात तथा 10 89170 दिन पूर्व